विज्ञान

परिषद् की मुख पत्रिका
मई 1991
2 रुपये 50 पैसे
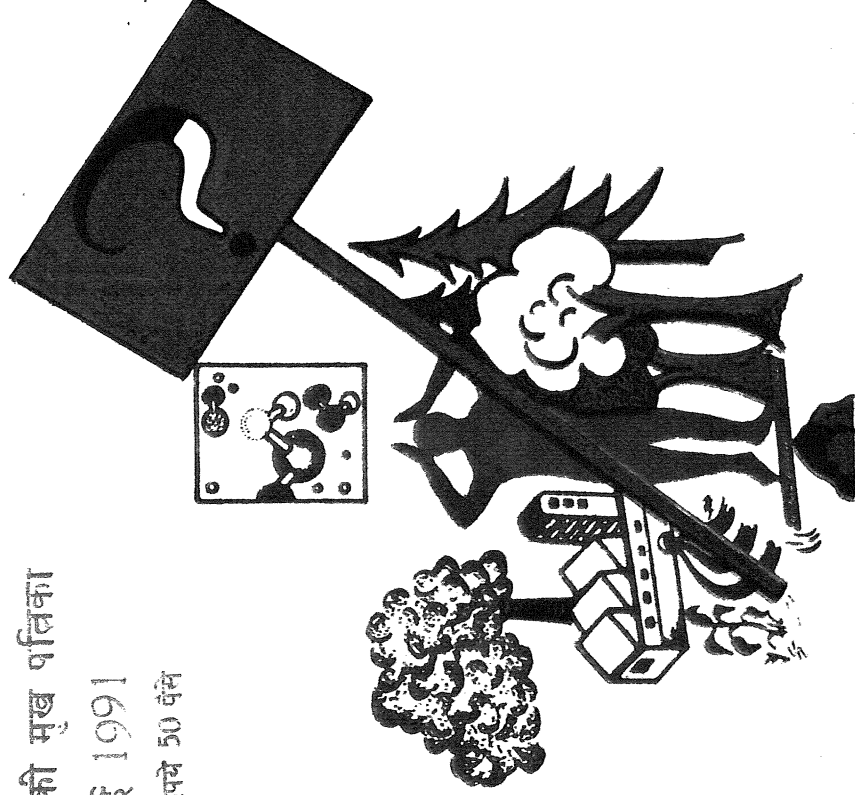
विज्ञान परिषद्, प्रयाग

विज्ञान

परिषद् की स्थापना 1913; 'विज्ञान' का प्रकाशन अप्रैल 1915
मई 1991; वर्ष 77, अंक 2

प्रकाशक
डॉ० हनुमान प्रसाद तिवारी
प्रधान मंत्री
विज्ञान परिषद् प्रयाग

●

सम्पादक
प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव

●

मुद्रक
श्री सरयू प्रसाद पाण्डेय
नागरी प्रेस
186 अलोपी बाग
इलाहाबाद

●

सम्पर्क
विज्ञान परिषद्
महर्षि दयानन्द मार्ग
इलाहाबाद-211002

मूल्य
आजीवन : 200 रु० व्यक्तिगत; 500 रु० संस्थागत
त्रिवार्षिक : 60 रु०
वार्षिक : 25 रु०
एक प्रति : 2 रु० 50 पैसे

विज्ञान विस्तार

लेसर : एक परिचय

जगदीश चन्द्र मोंगा

लेसर, इस शताब्दी के महत्त्वपूर्ण आविष्कारों में से निश्चय ही एक माना जा सकता है। इस आविष्कार के लगभग तीन दशकों में इसने विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के हर क्षेत्र में अपनी अमिट छाप छोड़ी है। लेसर ने पारंपरिक प्रकाश स्रोतों के कई गुणधर्मों जैसे, तीव्रता, दीप्ति लाईन की चौड़ाई, सांसक्तता इत्यादि को कई गुना बढ़ा दिया है। लेसर सर्वगुण सम्पन्न होने के नाते एक अद्वितीय प्रकाश स्रोत है। यह कहना अनुचित न होगा कि आज हम एक नये युग का उदय देख रहे हैं जिसे फोटोनिक्स कहते हैं, जिसमें फोटॉन वही भूमिका निभाते हैं जो इलेक्ट्रॉनिकी में इलेक्ट्रॉन निभाते हैं।

साधारण भाषा में लेसर संकुचित कोण में अति सूक्ष्म विस्तार लिये चलने वाला एक तीव्र प्रकाश पुंज है। लेसर प्रकाश परम्परागत प्रकाश स्रोतों से सर्वथा भिन्न है। परम्परागत स्रोतों से निकलने वाला प्रकाश बेतरतीब ढंग से चहुं दिशाओं में फैलने वाली भीड़ की तरह है, परन्तु लेसर प्रकाश सुनियोजित ढंग से कदम से कदम मिलाकर चलने वाली एक सैनिक टुकड़ी की तरह है। जहाँ परम्परागत प्रकाश एक शोर की भाँति है तो लेसर प्रकाश एक संगीत है। लेसर प्रकाश में एक क्रम है, ताल है, लय है, अनुशासन है जिनके फलस्वरूप इसे विशिष्ट गुणधर्म उपलब्ध हैं।

लेसर शब्द अंग्रेजी भाषा के शब्दों (Light Amplification of Stimulated Emission of Radiation) अक्षरों के मिलाप से बना है, जिसका अर्थ है, विकिरण के प्रेरित उत्सर्जन से प्रकाश का प्रवर्धन। बिकिरण तथा पदार्थ की तीन महत्वपूर्ण अन्योन्य क्रियाओं में से प्रेरित उत्सर्जन एक है। प्रत्येक अणु में एक धन आवेशीय नाभिक होता है जिसके चारों ओर ऋण आवेशीय इलेक्ट्रॉन निश्चित ऊर्जा के कक्षाओं में चक्कर लगाते हैं। अणु एक निश्चित ऊर्जा के फोटॉन का अवशोषण करके कम ऊर्जा की अवस्था से अधिक ऊर्जा की अवस्था में जा सकता है। इस प्रक्रिया को अवशोषण कहते है। इस प्रक्रिया के फलस्वरूप अणु तल अवस्था से उत्तेजित अवस्था में पहुँच जाता है। उत्तेजित अणु एक फोटॉन के उत्सर्जन के माध्यम से अधिक ऊर्जा की अवस्था से कम ऊर्जा की अवस्था में आ सकता है। इस प्रक्रिया को स्वतः उत्सर्जन कहते हैं। इस प्रक्रिया द्वारा उत्सर्जित फोटॉन आपस में कोई तालमेल नहीं रखते तथा इनका उत्सर्जन किसी भी दिशा में हो सकता है। यदि यही उत्सर्जन किसी बाह्य विकिरण क्षेत्र की उपस्थिति में हो तो प्रत्येक फोटॉन उत्तेजित अणुओं को अपने समान रूप फोटॉन उत्सर्जित करने के लिए प्रेरित कर सकता है। इस प्रक्रिया को प्रेरित उत्सर्जन कहते हैं तथा यह प्रक्रिया लेसर का आधार है। इस प्रक्रिया द्वारा उत्सर्जित फोटॉन की दिशा, तरंग दैर्घ्य, ध्रुवण (पोलराइजेशन) इत्यादि सभी प्रेरित फोटॉन के समान होते हैं, जिसके फलस्वरूप लेसर प्रकाश को अतिसूक्ष्म फैलाव, उच्च तीव्रता उच्चदीप्ति, सांसक्तता इत्यादि दुर्लभ गुणधर्म प्राप्त हो जाते हैं।

लेसर अथवा लेसर जैसे किसी यन्त्र का उल्लेख हमारे प्राचीन पौराणिक गाथाओं में भी मिलता है। भगवान शिव जब कैलाश पर्वत पर चिरसमाधि में लीन थे तो देवताओं ने चिंतित होकर उनकी समाधि भंग करने के लिए कामदेव को भेजा। तब अपनी समाधि भंग होने पर क्रुद्ध होकर भगवान शिव ने तांडव नृत्य करते हुए अपना तीसरा नेत्र खोला जिसमें से निकले हुए तीव्र प्रकाश पुंज के स्पर्श मात्र से कामदेव भस्म हो गये। इस प्रसंग में संभवतः भगवान शिव की जटाओं में छिपे किसी लेसर जैसे यन्त्र की झलक मिलती है। आधुनिक साहित्य में इसका उल्लेख एच०

लेसर प्रभाग, भा० प० अ० केन्द्र, बम्बई-400085

जी० वैल्स के उपन्यास "वार ऑव द वर्ल्डज' में मिलता है, जिसमें मंगलग्रह वासियों द्वारा पृथ्वी पर आक्रमण की कल्पना की गयी है। वह ऐसे यंत्रों से सुसज्जित थे कि जिनके स्पर्श मात्र में पेड़ जल उठते, चट्टानें टूट कर बिखर जातीं तथा पत्थर पिघल कर बहने लगते। पृथ्वी पर मंगलग्रह वासियों द्वारा एक वीभत्स विध्वंस की सजीव कल्पना की गयी है। यह उपन्यास वर्ष 1898 में प्रकाशित हुआ था।

प्रेरित उत्सर्जन की संकल्पना आइंस्टीन ने वर्ष 1916 में की जो कि लेसर की आधारशिला है। पदार्थ तथा विकिरण की तीन अन्योन्य क्रियाओं में से यह एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया हैं, परन्तु इस प्रक्रिया की तरफ प्रयोग वैज्ञानिकों ने 1920 तथा 1930 के दशकों में अधिक ध्यान नहीं दिया क्योंकि इस समय के मध्य वे परमाण्वीय तथा आण्विक वर्णक्रमदर्शकी में कार्यरत थे। इस समय में परमाण्वीय तथा आण्विक संरचना के बारे में बहुत अधिक महत्वपूर्ण ज्ञान अर्जित किया गया। तत्पश्चात् 1940 के दशक में प्रेरित उत्सर्जन की संकल्पना को दर्शाने का कार्यभार कई प्रायोगिक वैज्ञानिकों ने लिया, परन्तु इस धारणा को दर्शाना काफी कठिन सिद्ध हुआ। फिर विश्व युद्ध के दौरान 24,000 मै० हर्ज० आवृत्ति का दोलित्र बनाने की आवश्यकता पड़ी। इसके लिए प्रेरित उत्सर्जन की संकल्पना का प्रयोग करके अमोनिया के उत्तेजित अणुओं की सहायता से 23,870 मै० हर्ज० आवृत्ति का विकिरण प्राप्त किया गया। यह संसक्त विकिरण के जनन में इतनी अधिक आवृत्ति पर विकिरण पैदा करने में मील का पत्थर सिद्ध हुआ। इस प्रकरण को मेसर (Maser) नाम दिया गया। इसका आविष्कार वर्ष 1953 में हुआ था। इसका विचार अमेरिका में मेरीलैण्ड विश्वविद्यालय तथा कोलंबिया विश्वविद्यालय में तथा सोवियत रूस में लैबडेव संस्थान में स्वतंत्र रूप से आया तथा इन दोनों पर मेसर के अनुसंधान में किये गये कार्य की प्रमाणिकता वर्ष 1964 में हाऊनज, बासोव तथा प्रोखोरोव को नोबेल पुरस्कार से सम्मानित करके सिद्ध हुई।

मेसर के आविष्कार के पश्चात् भी लेसर के आविष्कार तक लगभग सात साल बीत गये। इसका मुख्य कारण यह था कि प्रेरित उत्सर्जन की संकल्पना के अतिरिक्त अन्य दो महत्वपूर्ण धारणाओं के उद्गम की प्रतीक्षा करनी पड़ी; पहली धारणा थी प्रकाशिकीय पम्पन तथा दूसरी धारणा थी फैबरी-पैरो अनुनादक। ये दोनों बातें लेसर के आविष्कार में बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध हुईं। इनके प्रयोग से वर्ष 1960 में सबसे पहले रुबी नामक पदार्थ से लेसर किरणों का जनन किया गया।

साधारणतया यदि किसी पदार्थ में से विकिरण गुजरे तो पदार्थ द्वारा विकिरण का अवशोषण ही होता है, क्योंकि ऐसी स्थिति में परमाणु घनत्व तल अवस्था में, उच्च ऊर्जा अवस्था के अनुपात में अधिक होता है, परन्तु यदि ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न की जा सकें जिसमें अधिक ऊर्जा अवस्था में परमाणु घनत्व तल अवस्था से अधिक हो तो इससे आपतित विकिरण का प्रवर्धन होगा। इस पदार्थ को, जिसमें ऐसी स्थिति उत्पन्न हो उसे सक्रिय माध्यम कहते हैं, तथा इस प्रक्रिया को संख्या व्युत्क्रमण कहते हैं। लेसर वास्तव में, अनुनादक में रखा हुआ एक सक्रिय माध्यम है, जिसके समावेश से दोलित्र का निर्माण होता है। विभिन्न सक्रिय माध्यमों का प्रयोग करके विभिन्न लेसरों का निर्माण किया गया है जिसमें से कुछ महत्वपूर्ण लेसर इस प्रकार हैं :

1. घन अवस्था लेसर :

रुबी, निओडीयम - याग-नियोडीयम-ग्लास, ऐरबियम-याग इत्यादि। इन लेसरों का पम्पन प्रकाशिकीय स्रोतों से होता है।

2. गैस लेसर :

हिलीयम-निओन, कार्बन डाइऑक्साइड, हिलीयम-कैडमियम इत्यादि। इन लेसरों का पम्पन विद्युत्-प्रवाह से होता है।

3. आयन लेसर :

इसमें महत्वपूर्ण लेसर है आरगन-आयर लेसर। इसमें भी पम्पन विद्युत्-प्रवाह से होता है।

4. एक्साईमर लेसर :

उच्च आवृत्ति के लेसरों में यह काफी महत्वपूर्ण लेसर है। इनकी तरंग लम्बाई 248 नै० मी० से 360 नै० मी० के लगभग है। इनका पम्पन विद्युत्-प्रवाह तथा इलेक्ट्रॉन पुंज दोनों से ही किया जाता है। उच्च शक्ति तथा कम तरंग लम्बाई के लेसरों में यह महत्वपूर्ण लेसर है।

5. कार्बनिक रंजक लेसर :

यह लेसर ऐसे कार्बनिक पदार्थों पर आधारित है जो दृश्य प्रकाश वर्णक्रम क्षेत्र में प्रकाश का अवशोषण करते हैं तथा इसी क्षेत्र में प्रकाश उत्सर्जन करते हैं। इन पदार्थों का प्रतिदीप्ति वर्णक्रम काफी विस्तारित होता है जिसके कारण इनका प्रयोग समस्वरणीय लेसर के लिए किया जाता है। इनका पम्पन प्रकाशिकीय विधि से अथवा किसी अन्य लेसर से किया जाता है।

6. अर्धचालक लेसर :

यह लेसर, जिसका आविष्कार वर्ष 1961 में हुआ, पहला लेसर है, जिसको प्रयोगशाला में अनुसंधान तथा विकास से सीधे उपभोक्ताओं में प्रयोग हेतु बड़े पैमाने पर निर्माण के लिए प्रयोग किया गया। यह सस्ता, सुलभ तथा अपने उपयोगों की विविधता के कारण सबसे महत्वपूर्ण लेसर है।

लेसर को विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विभिन्न क्षेत्रों में बड़ी विविधता तथा व्यापक रूप से प्रयोग में लाया जा रहा है। इस तरह के अद्वितीय प्रकाश स्रोत की उपलब्धि से भौतिकी तथा रासायनिकी में कई नई तथा महत्वपूर्ण खोजें हुई हैं। इस प्रकार लेसर की उच्च सांसक्तता के फलस्वरूप होलोग्राफी की खोज हुई तथा डैनिस गैबोर को नोबेल पुरस्कार मिला। लेसर से मिलने वाली उच्च तीव्रता के फलस्वरूप पदार्थों के अरैखिक व्यवहार को देख पाना सम्भव हुआ तथा ऐसी नई अरैखिक वर्णक्रमदर्शीय रासायनिक प्रक्रियाएँ संभव हो पायीं जिनसे पदार्थों के गुणधर्मों के प्रति असम्भव जानकारी प्राप्त हुई। इन्हीं कार्यों के लिए प्रो० ब्लूमबर्गन को नोबेल पुरस्कार मिला। लेसर की लाइन-चौड़ाई बहुत कम होने के कारण परम्परागत अवशोषण वर्णक्रमदर्शिकी में बहुत अधिक विभेदन मिल पाना सम्भव हुआ।

लेसर वर्णक्रमदर्शिकी तकनीकी में केवल वर्णक्रम दर्शकविद् की ही रुचि नहीं है। लेसर परमाण्विक प्रतिदीप्ति वर्णक्रममापी का प्रयोग करके रसायनिक पदार्थों की अतिसूक्ष्म मात्रा (पिको ग्राम प्रति घन से० मी०) में उपस्थिति की सूचना मिल सकती है। इस तरह की तकनीकी को प्रदूषक नियंत्रण, खनिज अन्वेषण तथा विस्फोटन पदार्थों के संसूचन के लिए प्रयोग में लाया जाता है।

चिकित्सा एक अन्य क्षेत्र है जहाँ लेसर अपनी उपयोगिता सिद्ध कर चुका है। वास्तव में लेसर फोटोकोएगुलेटर द्वारा आँख की शल्य चिकित्सा लेसर का सबसे पहला उपयोग था। आज लेसर का शल्य चिकित्सा में एक छुरी की भाँति प्रयोग किया जा रहा है। इसके अनेक लाभ हैं, जैसे काटने में अचूकता, खून का न बहना, कम से कम दर्द तथा घाव का जल्दी भर जाना इत्यादि। लेसर के पुंज को कांच की सहायता से शरीर के आंतरिक अंगों तक पहुँचाया जा सकता है। इसलिए बिना किसी चीर-फाड़ के शल्य चिकित्सा की जा सकती है, उदाहरणतः, हृदय की रक्त वाहिनी की बाधा हटाना, जिसके लिए सामान्यतः बाईपास सर्जरी की आवश्यकता पड़ती है।

प्रकाशिकीय संचार एक अन्य क्षेत्र है जिसमें लेसर के आगमन से महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे हैं। इसमें एक अर्धसंवाहक लेसर अथवा प्रकाश उत्सर्जन डायोड में उत्सर्जित प्रकाश स्पंदों को कांच तन्तु के माध्यम से संचारित किया जाता है। प्रकाश को कई किलोमीटर दूर तक संचारित करने के लिए यह आवश्यक है कि कांच तन्तु प्रकाश को अधिक मात्रा में अवशोषित न करे। कांच तन्तुओं को बनाने के लिए अतिशुद्ध पदार्थों का उपयोग करके इन तन्तुओं में होने वाली प्रकाश की हानि को कम किया जा सकता है। इस प्रकार सूचना प्रसारण लम्बी दूरी तक बिना किसी पुनरावर्तक से किया जा सकता है। प्रकाशिकीय सूचना संग्रहण

तथा संसाधन ऐसा ही अन्य क्षेत्र है जिसमें लेसर के उपयोग की बड़ी आशाएँ हैं।

लेसर-प्रति संलयन पर आधारित विद्युत् उत्पादन एक अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र है जहाँ लेसर समस्त मानव-जाति के उज्ज्वल भविष्य के लिए कार्यरत है। इन संलयन क्रियाओं को शुरू करने के लिए ड्यूटीरियम तथा ट्रिशियम (डी०-टी०) मिश्रण को 10 करोड़ डि० सें० तक गर्म करना पड़ता है। इस तापमान पर इसे इतने समय तक संगठित रखना पड़ता है कि संलयन क्रियाएँ आरम्भ हो सकें। लेसर प्रेरित संलयन क्रिया में शक्तिशाली लेसर-पुंज ईंधन को संपीड़ित करते हैं तथा इस तरह वांछित तापमान तक गर्म करते हैं। यद्यपि आज ऐसे लेसर उपलब्ध नहीं है जो डी० टी० ईंधन को गर्म करके संलयन क्रियाओं की व्यावहारिक उपयोगिता सिद्ध कर सकें, परन्तु वैज्ञानिक लेसर-प्रेरित संलयन की संभाव्यता को दर्शाने के निकट हैं। लेसर-प्रेरित संलयन पर आधारित ऊर्जा उत्पादन में भले ही 20-30 वर्ष लग जायें, पर मानव जाति के उज्ज्वल भविष्य के लिए ऊर्जा का महत्व इतना अधिक है कि इस दिशा में लगाये सभी प्रयास कम होंगे।

पदार्थ संसाधन तथा संश्लेषण में लेसर के कई उपयोग हैं विशेषकर यदि स्वचालित यंत्रों के साथ इसका समन्वय किया जाये। इससे भी अधिक महत्व-पूर्ण तथा रोचक अपरंपरागत प्रणालियाँ हैं जिनमें मिश्रधातु बनाने की प्रक्रिया तथा लेसर द्वारा ग्लेजिंग इत्यादि विशेष हैं। इनसे नई प्रकार की मिश्र धातु तथा परिचित धातुओं की नई अवस्थाओं के बारे में पता चल सकता है जिनके कई असामान्य गुणधर्म हो सकते हैं, जैसे रासायनिक तथा बलकृत संक्षारण से असाधारण प्रतिरोधक शक्ति।

भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र में संस्थापक दिवस समारोह एक ऐसा महत्वपूर्ण अवसर है जब हम इस केन्द्र के संस्थापक तथा भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्य-क्रम के जन्मदाता, डॉ० होमी भाभा के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। आज के दिन, उनके आदर्शों और ऊँचे लक्ष्यों की पूर्ति एवं परम योग्यता को प्राप्त करने के अपने संकल्प को दोहराते हैं।

डॉ० होमी भाभा एक ऐसे महान स्वप्नदृष्टा थे जिन्होंने 1944 में ही भारत के लिए नाभिकीय ऊर्जा की आवश्यकता का अनुभव किया। इसके फल-स्वरूप भारत में नाभिकीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के लिए एक ऐसा विस्तृत और गतिशील अनुसंधान एवं विकास का आधार तैयार हुआ जो विकासशील देशों के इतिहास में अद्वितीय है।

इस समारोह से हमें नयी गतिविधियों की समीक्षा और पिछले एक साल के कार्य कलापों के मूल्यांकन का सुअवसर भी मिलता है। मैं समझता हूँ कि हमें अपनी उपलब्धियों पर गौरव करने का अधिकार है। अपने भावी कार्यक्रमों एवं लक्ष्यों की रूपरेखा तैयार करने का भी हमारे लिए यह विशेष मौका होता है। हमारी इन सभी उपलब्धियों का श्रेय हमारे वैज्ञानिकों, इंजीनियरों एवं तकनीशियनों तथा प्रशासनिक व सहायक कर्मचारियों के सामूहिक प्रयास को जाता है।

रिएक्टर इंजीनियरी के सभी पहलुओं पर भारत के नाभिकीय विद्युत् कार्यक्रम को अनुसंधान एवं विकास सम्बन्धी सहायता उपलब्ध कराने का प्रमुख उत्तरदायित्व इसी केन्द्र का रहा है। माडरेटर इन्लेट मेनीफोल्डों की विफलता के कारण मद्रास परमाणु बिजलीघर की दोनों इकाइयों में उत्पन्न गम्भीर सम-स्याओं को हल करने में हमारी निर्णायक भूमिका, इसका एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। यह हमारे लिए अत्यन्त सन्तोष का विषय है कि इसके लिए विकसित विशिष्ट रिमोट माइक्रोविडियो निरीक्षण तकनीक द्वारा इस समस्या का अध्ययन किया गया। जिस तत्परता से हमने इसके समाधान ढूंढ़े व रोबेटिक औजारों की सहायता से उन्हें क्रियान्वित किया वह हमारे आत्मविश्वास का परिचायक है।

आप सभी जानते हैं कि नरोरा की प्रथम इकाई पिछले साल क्रांतिक हुयी। इसमें प्रयुक्त अनेक प्रणा-लियों और उपस्करों का अभिकल्पन इस केन्द्र में ही किया गया है। रेडियो आइसोटोप के उत्पादन हेतु

ध्रुव रिएक्टर में किरणन के लिए प्रयुक्त ट्रे छड़ें मुख्य शीतक पम्पों के साथ रिएक्टर की बन्द अवस्था में ही रखी जाती रही हैं। रिएक्टर विषाक्तन निकासी के लिए रिएक्टर को तीस घन्टे तक बन्द रखना पड़ता था। इस प्रणाली में इस प्रकार के सुधार किये गये हैं कि रिएक्टर की चालू अवस्था में ही ट्रे छड़ों को भरा जा सके। इससे आइसोटोप उत्पादन क्षमता में बढ़ोत्तरी हुई है।

30 किलोवाट क्षमतावाला अनुसंधान रिएक्टर 'कामिनी' जिसमें किरणित ईंधन पिनों की न्यूट्रॉन रेडियोग्राफी तथा कुछ अन्य प्रयोगों की सुविधाएं हैं, यूरेनियम 233 के उपयोग पर आधारित है। कलपक्कम में इस रिएक्टर के निर्माण का काफी कार्य हो चुका है। इस रिएक्टर का एक शून्य ऊर्जा माक्-अप रिएक्टर, पूर्णिमा- III ट्राम्बे में है जिसके आगामी कुछ सप्ताहों में क्रांतिकता प्राप्त कर लेने की संभावना है।

नाभिकीय विद्युत् परियोजना के लिए नाभिकीय पदार्थों के विकास का महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम भी इस केन्द्र में चल रहा है। इस दिशा में जर्कोनियम-नायोबियम मिश्र धातु दाब नलिकाओं की संविरचन विधि में दिये सुझावों के आधार पर नाभिकीय ईंधन हैदराबाद में इनका नियमित उत्पादन किया जा रहा है। यह दाबनलिकाएँ ककरापार और अन्य भावी परमाणु बिजलीघरों में इस्तेमाल की जाएँगी।

वर्तमान यूरेनियम आधारित विद्युत् रिएक्टरों एवं थोरियम ईंधन पर आधारित भावी विद्युत् रिएक्टरों के बीच, प्लूटोनियम ईंधनयुक्त फास्ट ब्रीडर रिएक्टर एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। इसी बाय को ध्यान में रखते हुये भुक्तशेष ईंधन की पुनर्संसाधन प्रौद्योगिकी को औद्योगिक स्तर पर लाने हेतु इस केन्द्र द्वारा काफी प्रयास किया जा रहा है। भुक्तशेष ईंधन के प्लूटोनियम के रासायनिक पृथक्करण के लिए विद्युत् अपघटन तकनीकों में एक महत्त्वपूर्ण सफलता मिली है। इससे पुनर्संसाधन की जटिलता तथा नाभिकीय अपशिष्ट की मात्रा में उल्लेखनीय कमी आती है।

रिएक्टरों की सुरक्षा पर ध्यान देते हुये हमने एक कम्प्यूटरोकृत तुलनात्मक प्रणाली विकसित की है जो रिएक्टर ट्रिप की व्यवस्था करती है और प्रोसेस वेरिएबल्स हेतु संकेत उपलब्ध कराती है। यह प्रणाली ककरापार परमाणु बिजलीघर में संस्थापन के लिए तैयार की गई है तथा दूसरे औद्योगिक संयंत्रों में भी इसका प्रयोग हो सकता है।

आइसोटोप उत्पादन एवं विकिरण अनुप्रयोग, इस केन्द्र की एक दूसरी महत्त्वपूर्ण गतिविधि रही है। बंगलौर में 'रश्मि' के चालू होने के उपरान्त नई दिल्ली स्थित श्रीराम औद्योगिक अनुसंधान संस्थान के परिसर में जनवरी 1990 में, एक दूसरे विकिरण निर्जर्मीकरण संयंत्र की स्थापना की गई। यह संयंत्र, उत्तरी क्षेत्र के बहुत से उद्योगों की ज़रूरतों को पूरा कर रहा है। बड़ौदा में शीघ्र ही संग्रहित वाहित मल सिवेज हाइजिनाइजेशन रिसर्च इरेडिएटर (SHRI) की स्थापना की जा रही है। भारत में ऐसा यह पहला संयंत्र है जो बड़ौदा शहर के लगभग आधे वाहित मल को संसाधित करने में समर्थ होगा।

जीव विज्ञान तथा कृषि के भी क्षेत्र में केन्द्र में विकसित फसलों की कई किस्मों के लगभग 500 टन प्रमाणित बीज, किसानों में वितरण हेतु महाराष्ट्र एवं आंध्र प्रदेश राज्य बीज निगम द्वारा उत्पादित किये गये। मूँगफली एवं काले चने के दो नये उत्परिवर्तियों (म्यूटेंटों) को गुजरात, महाराष्ट्र एवं मध्य प्रदेश हेतु जारी करने की सिफारिश की गई।

मूलभूत अनुसंधान के क्षेत्र में हमारी उपलब्धियाँ उल्लेखनीय रही हैं। ध्रुव अनुसंधान रिएक्टर में कई न्यूट्रॉन स्पेक्ट्रोमीटर चालू किये गये हैं। भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र और विश्वविद्यालयी सहयोग कार्यक्रम के अंतर्गत विश्वविद्यालय तथा अनुसंधान संस्थानों के वैज्ञानिकों को भी ये स्पेक्ट्रोमीटर उपलब्ध कराये गये हैं। कुछ समय पहले केन्द्र के वैज्ञानिकों के अनुसंधान कार्यों के फलस्वरूप पूर्व-साम्यावस्था विखंडन की एक नयी विखंडन प्रक्रिया सामने आई। पेल्ट्रान त्वरित्र में पिछले एक वर्ष के दौरान नाभिक-नाभिक टक्कर के

प्रयोग किये गये हैं इनसे इस खंडनीय विनकाफी। प्रक्रिया के लिए प्रायोगिक प्रमाण प्राप्त हुआ है। लगभग सभी उच्च तापीय अतिचालकों को इस केन्द्र में संश्लेषित किया गया है। ध्रुव रिएक्टर स्थित न्यूट्रॉन स्पेक्ट्रोमीटर से उनकी संरचना सहित अन्य गुणधर्मों पर कार्य किया गया है।

यहाँ प्लाज्मा स्प्रे तकनीक के प्रयोग से स्टेनलेस स्टील पर उच्च Tc पदार्थों की 100-200 माइक्रोन मोटाई की कोटिंग भी तैयार की गई है। यह एक महत्त्वपूर्ण कार्य है क्योंकि ऐसा प्रतीत होता है कि इन पदार्थों में उच्च धारा घनत्व केवल पतली फिल्मों के द्वारा ही सम्भव होगा।

उच्च लवणता प्रतिबल द्वारा प्रेरित क्लोन जीन तथा नाइट्रोजन स्थिरीकरण जीनों की संरचना के अध्ययन के लिए आनुवंशिक इंजीनियरी तकनीकों का प्रयोग किया गया है। डी एन ए के पुनर्संयोजन हेतु अपेक्षित एक नये जीन तथा बैक्टीरिया के प्रति-जीवाणु प्रतिरोध में शामिल दो अन्य जीनों का भी पता लगाया गया है और उन्हें ई० कोलाई में मैप कर दिया गया है।

गुलमर्ग में हमारे वैज्ञानिकों ने हरक्यूलिस X-1से TEV गामा किरणों के स्पष्ट शेरेकोव विकिरण संकेत तथा 10^{10} फोटोन प्रति सें० मी०^{2} प्रति सेंकंड फ्लक्स पर कैसीयोपिया गामा--1 ब्रह्मांड स्रोत प्राप्त किये हैं। यह आशा की जाती है कि इन प्रेक्षणों का पल्सर यंत्र रचना एवं द्विअधारी तंत्र की गतिशीलता पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ेगा।

कम्प्यूटर विज्ञान के क्षेत्र में, कम्प्यूटर चित्रण, त्रिआयामी ठोस मार्डलिंग एवं आण्विक मार्डलिंग, डाटा बेस प्रबंध प्रणाली, समांतर संसाधन और कृत्रिम बोधगम्यता के क्षेत्र में उनके अनेक उल्लेखनीय साफ्ट-वेयर विकसित किये गये हैं।

नाभिकीय विज्ञान एवं सम्बन्धित प्रौद्योगिकी में हमारे सुदृढ़ अनुसंधान एवं विकास आधार ने हमें कई स्पिनआफ प्रौद्योगिकियों की प्रगति में सहायता दी है।

भूमिगत नाभिकीय विस्फोटों के मानिटरन के लिए विकसित भूकंपीय तंत्रों के अनुभव से हमें खान उद्योग में वर्तमान चट्टान विस्फोटन की अग्रिम चेता-वनी से संबंधित प्रणाली के अभिकल्पन में सहायता मिली है। इसने खान उद्योग को अधिक सुरक्षा प्रदान की है। इस वर्ष के प्रारम्भ स, कोलार स्थित चट्टान यांत्रिक संस्थान को, कोलतार स्वर्ण क्षेत्र के खानों में एक कम्प्यूटरीकृत सूक्ष्म भूकंपी मानिटरिंग प्रणाली की स्थापना करके उसे उन्हें सौंप दिया गया है।

केरल में मोनाजाइट रेत में विरल मृदा के पृथक्करण हेतु विलायक निष्कर्षण तकनीक को अंतिम रूप दिया जा चुका है। समेरियम, इट्रियम एवं नियो-डीमियम के उत्पादन हेतु जानकारी उपलब्ध की गई। स्थायी चुंबक बनाने, रंगीन टेलीवीजन ट्यूबों के लिए फास्फर तैयार करने एवं उच्च तापीय अतिचालकता में इनका विशेष रूप से प्रयोग होता है।

उद्योगों के प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण अब हमारे केन्द्र के कार्यक्रम का अंग बन गया है। पिछले वर्षों में 45 प्रौद्योगिकियों की जानकारी उद्योग को हस्तांतरित की जा चुकी है। हृदय के कृत्रिम वाल्वों में प्रयोग के लिए एक संरक्षण रोधी जिरकोनियम घटक, फलों की निर्जलीकरण ओसमोटिक विधि, पी० सी० पर आधा-

रित बिम्ब विश्लेषण प्रणाली, एल्यूमिनियम जरकोनियम मानक मिश्र धातुओं का उत्पादन, विकिरण मात्र मापकों एवं प्रदूषण मानिटरन उपकरणों की तकनीकी का हस्तांतरण इनमें उल्लेखनीय हैं।

पिछले कुछ वर्षों से नाभिकीय बिजलीघरों और विकिरण के बारे में हमारे देश में एक न्यूक्लिअर विरोधी लाबी सक्रिय है जो लोगों के मन में विकिरण सम्बन्धी काफी आशंकायें उत्पन्न कर रही है। हम तीस वर्षों से साइरस तथा पांच वर्षों से 'ध्रुव' का सुरक्षापूर्वक प्रचालन एवं परमाणु बिजलीघरों का सुरक्षित प्रचालन कर रहे हैं। यह इस बात का प्रमाण है कि हम रिएक्टरों के प्रचालन तथा विकिरण सुरक्षा के बारे में पूर्णतया सचेत हैं। इसके अतिरिक्त हमारी सभी नाभिकीय संस्थाओं को विकिरण के खतरों से सुरक्षा और स्वास्थ्य सम्बन्धी अनुसंधान एवं विकास सेवाएँ उपलब्ध कराना इस अनुसंधान केन्द्र की एक प्रमुख जिम्मेदारी रही है।

अब हम उस चरण पर पहुँच चुके हैं जहाँ हमें थोरियम ईंधन युक्त विद्युत् रिएक्टरों के बारे में गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिए। इस दिशा में एक प्रगत भारी पानी रिएक्टर के प्राथमिक अभिकल्पन का काम शुरू हो चुका है। इस रिएक्टर में प्लूटोनियम मिश्रित ऑक्साइड ड्राइवर असेंब्लियों द्वारा चालित थोरियम-यूरेनियम 233 ईंधन का क्रोड़ होगा। रिएक्टर प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अनुसंधान और इंजीनियरी के अंतिम प्रतिरूप के बीच की अवधि सामान्यतया दस वर्षों की होती है। अत: अभी से इस कार्य की शुरूआत करना अति उपयुक्त होगा।

आठवीं पंचवर्षीय योजना में प्रवेश करते ही हमें अपनी नई परियोजनाओं के लिए पर्याप्त इंजीनियरों, वैज्ञानिकों आदि की व्यवस्था करनी होगी। यह हम भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र की गतिविधियों से और अन्य परियोजनाओं से लेकर पूरा करना चाहेंगे। इससे हमारे वैज्ञानिकों की गतिशीलता को बढ़ोत्तरी भी मिलेगी जो उनकी प्रगति के लिए एक आवश्यक कदम है।

विज्ञान की विभिन्न विधाओं के पारस्परिक आदान-प्रदान, वैज्ञानिकों/इंजीनियरों की कार्यक्षमता, विज्ञान के अग्रणी क्षेत्रों में अनुसंधान कार्यक्रमों को सुनिश्चित करने और प्रौद्योगिकी के प्रगत क्षेत्रों में परियोजनाओं को पूरा करने में भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र भारत का शिरोमणि है। विश्व के केवल गिने-चुने संस्थान ही इस श्रेणी में आते हैं। योग्यता की पराकाष्ठा की प्राप्ति के लिए कुछ चुने हुए कम क्षेत्रों पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है ताकि इन क्षेत्रों की अनुसंधान एवं विकास गतिविधियों में वृद्धि करके हम अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में सफल हों। मुझे यह पूर्ण विश्वास है कि निकट भविष्य में हमारा यह केन्द्र उपलब्धियों की नई ऊँचाइयों को छू सकेगा। □□

('परमाणु', वर्ष 15/अंक 2/1990 से साभार)

अलेक्जेन्डर प्रोखोरोव

राघवेन्द्र कृष्ण प्रताप

लेसर (LASER) विकिरण-प्रेरित उत्सर्जन से प्रकाश-प्रवर्धन (Light Amplification by stimulated Emission of Radiation) का संक्षिप्त रूप है। वास्तव में, प्रत्येक परमाणु एक विशिष्ट रचना होता है जिसके अतिसूक्ष्म नाभिक के बाहर अपेक्षाकृत विशाल क्षेत्र में इलेक्ट्रॉन निश्चित कक्षाओं में, लगभग 1000 किलोमीटर प्रति सेकेंड की गति से गतिशील होते हैं। ऊर्जा के अवशोषण द्वारा इलेक्ट्रॉन उच्च ऊर्जा कक्षाओं में पहुँच जाते हैं। इसके पश्चात् इलेक्ट्रॉन के निम्न ऊर्जा कक्षा में लौटने के साथ प्रकाश-फोटॉन का उत्सर्जन करते हैं, परन्तु यदि यह उत्सर्जन किसी वाह्य विकिरण क्षेत्र की उपस्थिति में हो तो प्रत्येक फोटॉन उत्तेजित परमाणुओं को अपने समान फोटॉन उत्सर्जित करने के लिये प्रेरित कर सकता है और यही प्रक्रिया लेसर का आधार है।

भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के लेसर प्रभाग के वैज्ञानिक श्री जगदीश मोंगा के अनुसार "इस प्रक्रिया द्वारा उत्सर्जित फोटॉन की दिशा, तरंग दैर्घ्य ध्रुवण इत्यादि सभी प्रेरक फोटॉन के समान होते हैं जिसके फलस्वरूप लेसर प्रकाश के अतिसूक्ष्म फैलाव, उच्च तीव्रता, उच्च दीप्ति आदि दुर्लभ गुण में प्राप्त हो जाते हैं।"

आज तो होलोग्राफी, वर्णक्रमदर्शिकी, चिकित्सा प्रकाशकीय संचार और संलयन के क्षेत्रों में लेसर की नितनूतन उपलब्धियाँ हो रही हैं परन्तु जब 1964 में लेसर के आविष्कार के लिये टाउन्ज, बासोव और प्रोखोरोव को 'नोबेल पुरस्कार' से सम्मानित किया गया था तो 'नोबेल पुरस्कार' समिति की ओर से स्वीडेन की विज्ञान अकादकी के प्रोफेसर एडलेन मात्र यह टिप्पणी कर सके थे कि "लेसर के आविष्कार ने अनुसंधानकर्ताओं को एक ऐसा नवीन महत्वपूर्ण उपकरण प्रदान कर दिया है जिसकी प्रकार्यात्मक संभावनाएँ अभी भ्रूणावस्था में ही है।

लेसर के आविष्कार के लिये सम्मानित इस अनुसंधानकर्त्रयी के प्रोखोरोव (अलेक्जेन्डर प्रोखोरोव) के पिता मिखाइल प्रोखोरोव को उनकी राजनीतिक गतिविधियों के कारण 1910 में साइबेरिया भेज दिया गया था, परन्तु वहाँ से वे एक वर्ष बाद ही अपनी पत्नी के साथ भाग निकलने में सफल हो गये और एक जहाजी मजदूर के रूप में आस्ट्रेलिया पहुँच गये। वहीं तीन पुत्रियों—क्लाउडिया, वैलेन्तीना और येवजीनिया के पश्चात् 11 जुलाई 1916 को अल्बर्टन अस्पताल में अलेक्जेन्डर (पुकारने का नाम शूरी) का जन्म हुआ।

प्रोखोरोव परिवार अत्यन्त निर्धन था इसलिये बहुधा उसे बस्तियों से दूर रहना पड़ता था। शूरी के समवयस्क मित्र भी नहीं थे परन्तु जंगलों के पशु-पक्षी उन्हें बहुत आकर्षित करते थे। और यह प्रकृति-प्रेम अभी भी अलेक्जेन्डर के व्यक्तित्व का अंश बना हुआ है।

1917 की क्रांति के पश्चात् प्रोखोरोव परिवार पुनः रूस आने के लिये व्यग्र हो उठा और 1922 में शंघाई पहुँचकर, लादीवोस्तोक होते हुए अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए रेल द्वारा अपने नगर आरेनबर्ग पहुँचा।

आस्ट्रेलिया की गर्म जलवायु की तुलना में रूस की बर्फीली ठन्ड के कारण बार-बार अस्वस्थ हो जाने वाले बच्चों के साथ प्रोखोरोव परिवार ने कुछ समय ताशकन्द में व्यतीत किया और यहीं अलेक्जेन्डर ने पहली बार विद्यालयी जीवन का प्रारम्भ किया।

गणित और भौतिकी में अलेक्जेन्डर की प्रतिभा के प्रमाण उनकी प्राथमिक शिक्षा के वर्षों में ही दिखाई

प्रवक्ता (शिक्षा), अम्बिका प्रताप नारायण महाविद्यालय, बस्ती—272001

देने लगे थे। उनकी जीवनी लेखक ये० क्नोरे के अनुसार "वह प्रश्नों को ऐसे हल कर देते थे जैसे कोई खेल-खेल रहे हों, और वह अपनी कक्षा में सदैव प्रथम रहते थे।"

1930 में परिवार के लेनिनग्राद आने के कारण अलेक्जेन्डर ने लेनिनग्राद के उल्यानोव वैद्युतिक अभियंत्रण संस्थान के श्रमिक-विभाग में प्रवेश लिया। यह पाठ्यक्रम पूरा करने के बाद वे लेनिनग्राद विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग के छात्र हो गये और 1939 में सम्मानपूर्वक स्नातक उत्तीर्ण हुए। इसी वर्ष लेबेदेव भौतिकी संस्थान द्वारा उनका चयन किया गया।

जून 1941 में नाजी जर्मनी के रूस पर आक्रमण के कारण अलेक्जेन्डर को सैन्य-सेवा प्रारंभ करनी पड़ी। लेनिनग्राद में उन्होंने विमानभेदी तोपखाने का प्रशिक्षण प्राप्त कर लिया था इसलिए उनकी पदोन्नति करके उन्हें जूनियर लेफ्टिनेन्ट बना दिया गया। इसी अवधि में उन्होंने विवाह भी किया।

अक्तूबर 1941 में उत्तर-पश्चिमी मोर्चे पर घायल हो जाने के पश्चात् उनका दाहिना हाथ काट देना पड़ा। इसके पश्चात् उन्होंने 'दोलन प्रयोगशाला' में कार्य आरम्भ किया। उनका अनुसंधान विषय था स्टैबिलाइजेशन ऑव द फ्रीक्वेंसी ऑव ए वैक्युअम ट्यूब जनरेटर—और इसी विषय पर शोधकार्य के फलस्वरूप 1946 में उन्हें 'कैंडीडेट' की उपाधि प्राप्त हुयी।

उनका दूसरा शोध-विषय मूलभूत कणों के त्वरण से संबन्धित था। इस विषय पर कार्य करने की सलाह उन्हें अकादमीशियन वी० वेक्सलर द्वारा दी गयी थी जो उस समय डुबना में पहले सोवियत त्वरक के निर्माण में संलग्न थे। त्वरकों का विकास—प्रोटॉन सिंकोट्रॉन में अतिवेगी कणों संबंधी अनुसंधान—वास्तव में अरैखिक दोलन संबंधी अनुसंधान के साथ साथ चल रहा था। वैक्युअम ट्यूब जनित्रों की आवृत्ति के स्थिरीकरण सिद्धांत द्वारा ही विज्ञान की इस शाखा को गति प्राप्त हुयी थी। इन अनुसंधानों की सफलता पर राडार तकनीकों, रेडियो-संचार और टेलीविजन के अनेक व्यावहारिक उपयोग आश्रित थे। इस कारण स्थिर आवृत्ति जनित्रों की आवश्यकता भी बढ़ती जा रही थी। प्रोखोरोव दोनों क्षेत्रों में सक्रिय थे और 1948 में उन्होंने कुछ और साथियों के साथ रेडियो वर्णक्रम विज्ञान की आधारशिला रखी।

1950 में प्रोखोरोव के अनुसंधान-दल में एन० बासोव, जो मास्को के भौतिक और अभियन्त्रण संस्थान के स्नातक थे, भी सम्मिलित हुए। इसी वर्ष प्रोखोरोव को 'डॉक्टर' की उपाधि भी प्रदान की गयी और इसके पश्चात् उन्होंने अपने को रेडियो वर्णक्रम विज्ञान के क्षेत्र के कार्य में सीमित करने का प्रयास किया। ये० क्नोरे के शब्दों में रेडियो वर्णक्रम विज्ञान का अर्थ अलंकारिक भाषा में 'अणुओं के आंतरिक जीवन के रहस्यों को स्पष्ट करने वाली कूट-भाषा का अर्थ समझना' है। प्रकाश क्षेत्र तथा अवरक्त किरणों में ठोसों और गैसों की वर्णक्रम रेखाएँ केवल उनके अणुओं की इलेक्ट्रॉन-कक्षाओं के संबंध में जानकारी प्रदान करती है। परन्तु रेडियो वर्णक्रम विज्ञान से निम्न आवृत्तियों और ऊर्जा के उपयोग के कारण अधिक सूक्ष्मताओं और प्रक्रियाओं का ज्ञान प्राप्त करना संभव है। रेडियो वर्णक्रम रेखाओं से आंतरिक आण्विक संरचना अणुओं का निर्माण करने वाले परमाण्विक बलों और परमाण्विक गतियों के संबंध में सूचना प्राप्त हो सकती है। इतना ही नहीं, चूंकि वर्णक्रम रेखाओं की चौड़ाई और कण-दोलनों का अनुपात रेडियो क्षेत्र में प्रकाश क्षेत्र की अपेक्षा बहुत अधिक होता है, इस कारण वर्णक्रम रेखाओं और उनकी चौड़ाई के विश्लेषण से पदार्थ की अंतर्क्रियाओं का परिमाणात्मक अनुमान संभव हो जाता है।

परन्तु गैसों के अणुओं के चक्रीय वर्णक्रम की व्याख्या अपेक्षाकृत दुरूह थी। अणुओं में पारस्परिक संघट्ट और 'डायलर प्रभाव' के कारण वर्णक्रम रेखाओं की चौड़ाई अनुमान से कहीं अधिक प्राप्त हो रही थीं। प्रोखोरोव ने अणु किरणों जिनमें संघट्ट का अभाव होता है, के उपयोग का सुझाव दिया जिससे

संकुचित वर्णक्रम रेखाएँ प्राप्त हो सकती थीं और वर्णक्रम मापी की विभेदन क्षमता में वृद्धि संभव थी।

आणविक क्वांटम जनित्रों की आधारशिला बहुत धीरे-धीरे रखी जा सकी। वास्तव में क्वांटम सिद्धांत का प्रारम्भ इस वाक्य से होता है कि ऊर्जा का स्थानान्तरण निश्चित मात्रा एकक, जिन्हें क्वांटा कहते हैं, से ही संभव है। प्रकाश के क्वांटम सिद्धान्त के प्रणेता **अल्बर्ट आइंस्टाइन** ने यह सिद्ध किया था कि किसी पदार्थ और प्रकाश के मध्य ऊर्जा के विनमय की प्रक्रिया में कुछ प्रकाश फोटॉन नष्ट होते हैं और कुछ उत्पन्न हो जाते हैं। निश्चित आवृत्ति प्रकीर्णन (स्कैटरिंग) की प्रक्रिया में प्रत्येक प्रकीर्णिति फोटॉन का सम्बन्ध आपाती फोटॉन से होता है। परन्तु **सी० वी० रामन** और **के० कृष्णन** द्वारा खोजे गये 'रामन प्रभाव' के अन्तर्गत विकीर्णित प्रकाश की आवृत्ति आपाती प्रकाश से भिन्न हो सकती है। यह घटना अणु निर्मित करने वाले परमाणुओं की दोलन आवृत्तियों (आसिलेशन फ्रीक्वेंसी) से संबंधित क्वाटम प्रभाव के कारण संभव होती है। यदि परमाणु उत्तेजित अवस्था में न हों तो उन पर पड़ने वाली आपाती ऊर्जा का कुछ अंश उनमें समाहित होगा और शेष विकिरित हो जायेगा। यह विकिरित ऊर्जा आपाती ऊर्जा से निश्चय ही कम होगी। परन्तु यदि उत्तेजित परमाणुओं की ऊर्जा का कुछ अंश आपाती फोटॉनों को मिल जाय तो प्रकीर्णित फोटॉन अधिक ऊर्जा की स्थिति में होगी।

आइंस्टाइन ने अपनी गणनाओं के आधार पर यह भविष्यवाणी की कि पदार्थ द्वारा स्वतःस्फूर्त अवशोषण (स्पांटेनियस एब्सार्पशन) और विकिरण के अतिरिक्त विद्युच्चुम्बकीय क्षेत्र की विशेष रूप से चयनित ऊर्जा के द्वारा प्रेरित अथवा प्रभावित (इंड्यूस्ड) विकिरण भी सम्भव हो सकता है। अंतर्आण्विक दोलन की घटना और उसके प्रकीर्णन पर प्रभाव का विचार मेन्डेलस्टाम द्वारा प्रस्तुत किया गया था। प्रोखोरोव और वासोव ने इस विचार को और अधिक विस्तार दिया।

आइंस्टाइन के अनुसार एक वाह्य एक रंगीय प्रकाश क्षेत्र (मानो क्रोमैटिक फील्ड) के प्रभाव में विकिरत प्रकाश-क्वांटम की आवृत्ति, क्षेत्र की आवृत्ति के बराबर होती है। प्रकीर्णित फोटॉन की दिशा और ध्रुवीकरण भी वाह्य क्षेत्र के समान ही होते हैं। आइंस्टाइन ने 1916 में ही यह सुझाव दिया था कि इस प्रक्रिया में आपाती फोटॉनो की ऊर्जा के साथ-साथ उत्तेजित परमाणुओं के विकिरणों पर भी विचार किया जाना चाहिये। प्रकाश वर्णक्रम विज्ञान में इस संभावना पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता था और सारी गणनाएँ इस आधार पर की जाती थीं कि सभी परमाणु उत्तेजनाहीन अवस्था में रहते हैं। प्रोखोरोव के अनुसार "रेडियो सीमा में हमारे अनुसंधानों से यह स्पष्ट हुआ कि अणुओं की ऊष्मा-गतियों के परिणामस्वरूप परमाणुओं की एक बड़ी संख्या उत्तेजित अवस्था में रहती है। दूसरे शब्दों में यह परमाणु दोलन करते रहते हैं। आणविक किरणों में यह स्थिति भी प्राप्त की जा सकती है कि सभी परमाणु उत्तेजित अवस्था में ही हों। निर्बल वाह्य विकिरण से प्रभावित हो कर ऐसी प्रणाली मूल आपाती ऊर्जा को प्रवर्धित करके विकिरित करने लगती है।"

प्रयोगों द्वारा यह भी ज्ञात हुआ कि ऐसे आणविक जनित्रों का निर्माण सम्भव है जो अनिवार्य रूप से एक निश्चित आवृत्ति का एक वर्णीय विकिरण विशुद्ध प्रकाश-उत्पन्न कर सकें। इस रूप में विद्युच्चुम्बकीय विकिरण जनत्रि का विचार उत्पन्न हुआ जिसमें अणु और परमाणु ऊर्जा-स्त्रोतों के रूप में कार्य करें।

इस विचार पर आधारित पहला जनित्र प्रोखोरोव और बासोव द्वारा सोवियत रूस में 1953-55 में स्वतंत्र रूप में टाउन्ज द्वारा संयुक्त राज्य अमेरिका में 1954 में निर्मित किये गये। इसी वर्ष प्रोखोरोव 'दोलन प्रयोगशाला' के अध्यक्ष नियुक्त किये गये। वहाँ कार्य करते हुए उन्होंने पराचुंबकीय मणिभों, रक्तमणिभ की सहायता से लघुतरंग सीमा में निर्मित क्वांटम जनित्रों का अंतरिक्षीय संचार के लिये उपयोग करने का सुझाव दिया। इसी विचार ने क्वांटम-इलेक्ट्रॉनिकी की आधारशिला रखी।

सैद्धांतिक रूप में संभावना के बावजूद, प्रकाश क्षेत्र के क्वांटम जनित्र-लेसर का निर्माण 1960 में ही संभव हो सका। प्रकाश क्षेत्र में ऐसे स्रोत उपलब्ध नहीं थे जो अनिवार्य रूप में एक ही तरंग दैर्ध्य पर कार्य कर सकें। ऐसे स्रोतों का निर्माण भी आवश्यक था जिनमें उत्तेजित कणों की संख्या अनुत्तेजित कणों की संख्या से अधिक हो और स्वदोलित जनित्रों के लिये प्रकाश-क्षेत्र में अनुनाद को (रेजोनेटर) की आवश्यकता तो थी ही। उस समय उपलब्ध अनुनादकों का आकार विकिरण तरंगों के बड़ा रहता था और इसलिये प्रकाश क्षेत्र के लिये उनका चयन संभव नहीं था।

1958 में 'खुले' अनुनादक पर प्रोखोरोव का पहला लेख प्रकाशित हुआ। इसमें दो समानांतर दर्पण तलों का उपयोग किया था तथा यह प्रकाश और रेडियो तरंगों दोनों क्षेत्रों में कार्य कर सकता था। यह एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि आज भी सभी प्रकार की लेसर प्रणालियों में प्रोखोशेव के खुले अनुनादकों का प्रयोग किया जाता है।

1959 में प्रोखोरोव और बासोव को 'लेनिन पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। 1966 में प्रोखोरोव और उनके सहयोगियों ने अति शक्ति गैसलेसर निर्मित किया जिससे ऊष्मा को सीधे एक तरंगीय विद्युच्चुम्बकीय विकिरण में परिवर्तित किया जा सकता है।

1964 में 'नोबेल पुरस्कार' के पश्चात् 1966 में प्रोखोरोव को सोवियत विज्ञान अकादमी का पूर्ण सदस्य चुना गया और 1969 में उन्हें 'समाजवादी श्रम-वीर' का 'स्वर्णिम तारा' प्रदान करके सम्मानित किया गया। 1973 में वह सोवियत विज्ञान आकादमी के खगोल और भौतिकी विभाग के अध्यक्ष चुने गए। वे 'सोवियत विश्वज्ञान कोष' के मुख्य संपादक रहे और उन्हें 'लोमोनोसोव पदक' भी प्राप्त हो चुका है।

अप्रैल 1981 से वह सामान्य भौतिकी संस्था न के निदेशक पद पर कार्य कर रहे हैं। □□

आरोग्य की कुंजी

श्रीमती शुभा पाण्डेय

हमारे देश में कृषि तथा स्वास्थ्य के विषय में अनेक कहावतें प्रचलित हैं। नवीन ज्ञान के प्रकाश में लगता है कि ये कहावतें कहीं गप्पें तो नहीं हैं? और यदि नहीं हैं तो उनके लेखकों के नाम साथ-साथ क्यों नहीं मिलते? किन्तु ज्ञान तो ज्ञान है—अनुभवों के आधार पर तैयार किये गये नुस्खे होते हैं। इनका मूल उद्देश्य सामान्य जनता के लिए पका-पकाया माल परोसना है। इन्हें आजमा कर देखने वालों को लाभ होना ही चाहिए।

अब स्वास्थ्य विषयक अनेक पत्रिकाएँ भी प्रकाशित होती हैं। 'अरोग्य' हो या 'स्वास्थ्य' हो या अंग्रेज़ी की 'हेल्थ' पत्रिका, सभी में कुछ न कुछ ज्ञातव्य तथा करणीय बातें रहती हैं। इनसे अवगत होना पाठकों का, धर्म है, क्योंकि ज्ञानार्जन का यही तरीका है। फिर आरोग्य की कुंजी हासिल करने के लिए तो कुछ न कुछ बातें हरेक को जाननी ही चाहिए। ये बातें स्वयं में कोई उपचार नहीं हैं। ये तो ऐसी हिदायतें हैं जिनके अनुसार चलने पर स्वतः मार्ग-दर्शन मिल सकता है। एक तरह से उपचार के पूर्व का यह 'प्राथमिक उपचार' कहा जा सकता है। तो लीजिये स्वास्थ्य विषयक कुछ नुस्खे—

बीमार होने पर पहले क्या करें

1. ऐसे वैद्य या डॉक्टर के पास जायें जिस पर आपका विश्वास हो। आप अपने अभिन्न मित्र से भी सलाह ले सकते हैं।

2. अस्पताल की दूरी जान लें। बहुत दूर स्थित अस्पताल की अपेक्षा निकट वाला अस्पताल चुनें।

3. चिकित्सा के लिए बीमार पड़ने का इंतज़ार न करें अपितु शहर या नगर में उपलब्ध चिकित्सा सेवा से परिचित हो लें। पत्र-पत्रिकाओं द्वारा स्वास्थ्य

द्वारा डॉ० वी० एच० पाण्डेय, डाक-तार अस्पताल, लखनऊ—1

विषयक नई जानकारियों से अपने को अगवत कराते रहें—डॉक्टर/वैद्य पर एकदम निर्भर न रहें।

4. लगातार शिकायत बने रहने पर ऐसे लक्षण जो पहले न प्रकट हुए हों या लक्षणों के गहन होते रहने पर तुरन्त डॉक्टर के पास जायें।

5. अपने साथ ही अपने बच्चों की भी रक्षा का ध्यान रखें। स्मरण रहे बच्चों को समय से टीके लग जायें।

6. यदि आपके आसपास का पर्यावरण प्रदूषित हो तो हर 3 या 5 वर्ष पर टी. बी. का त्वचा-परीक्षण करायें।

7. 35 वर्ष की आयु प्राप्त होने के बाद अपनी दृष्टि के लिए मोतियाबिंद (ग्लाकोम) परीक्षण करावें।

8. यदि आप कई प्रकार की दवाएँ खा रहे हों तो इसका पता लगा लें कि सचमुच अब उनकी आवश्यकता है या नहीं?

9. जुकाम/सर्दी का सर्वोत्तम उपचार है—खूब सोना, तरल पदार्थ का सेवन, ज्वर रहने पर ऐस्पिरिन या क्रोसिन लेना और एक सप्ताह तक विश्राम करना।

10. छोटी से छोटी बीमारी के लिए डॉक्टर के पास न दौड़ें। प्राय: 60% बीमारियों का इलाज घर पर सम्भव है।

11. यदि फ्लू हो जाय तो इंजेक्शन लगवाने पर बल न दें। ये तो बूढ़ों तथा फेफड़ों और हृदय-रोगियों के लिए है।

12. यह जानने का प्रयास करें कि आपका एक्सरे तथा अन्य परीक्षण क्यों किये जा रहे हैं? ये क्यों आवश्यक हैं? डॉक्टर से उपयुक्त सवाल करें और अध्ययन भी करें।

13. यदि आपका डॉक्टर बात-बात में इंजेक्शन की बात करे तो समझिये कि आपका उपचार ठीक नहीं हो रहा।

14. डॉक्टर को अपनी पीड़ा (दर्द) का बयान कुछ इस प्रकार से करें—दर्द का स्थान, वह कितना प्रगाढ़ है, कब कितनी देर तक रहता है, स्थानिक है या फैलता है, किससे अच्छा होता है और कब गहन होता है?

15. अपने ज्वर या अपने भार को कम-ज्यादा करके न बतावें। इन्हे डिग्री या किग्रा० में व्यक्त करें। यह न कहें कि मुझे अच्छा नहीं लग रहा, अपितु पीड़ा का वर्णन कीजिये।

16. डॉक्टर की क्लीनिक छोड़ने के पूर्व ठीक से उपचार समझ लें। प्रश्न पूछने से या स्पष्टीकरण से डरें नहीं।

17. हिदायत के अनुसार सही समय पर सही मात्रा में दवाएँ लें। जब तक ठीक न हो लें, उपचार चालू रखें। डोज (मात्रा) के विषय में यह आवश्यक है कि संस्तुत मात्रा ही लें न रत्तीभर कम, न रत्ती भर ज्यादा। कभी यह न सोचें कि मात्रा बढ़ाकर खाने से अधिक लाभ हो जायेगा।

18. अन्य के नुस्खे को अपने ऊपर न आजमायें।

19. शीशी या पैकेट पर दी गई तिथि के बाद उस दवा को न खावें। उसे फेंक दें।

20. हर पीड़ा या दर्द का अर्थ यह नहीं है कि आप बीमार हैं और आपको दवा की जरूरत है। उदाहरणार्थ—थकान से ज्वर चढ़ सकता है। थकान मिटते ही ज्वर स्वयं उतर भी जाता है।

21. आवश्यकता न होने पर दवा न खायें या अनावश्यक रूप से दवा न लें। विटामिन की गोलियाँ व्यर्थ ही न खायें।

22. यथासम्भव दवा की गोलियों का इस्तेमाल करें क्योंकि इंजेक्शन महँगे पड़ते हैं।

23. अपने घर पर कुछ दवाएँ रखें। छोटी-मोटी शिकायतों का उपचार घर पर सम्भव है—

शिकायत	उपचार
(अ) एलर्जी	एंटीहिस्टामीन्स
(ब) सर्दी/जुकाम/बुखार	ऐस्पिरिन या इसके स्थानापन्न—पैरासेटामाल, कफसिरप, थर्मामीटर
(स) कब्जियत	मिल्क ऑव मैग्नीशिया, जुलाब की दवाएँ

(द) पतले दस्त	काओपेक्टेट
(य) पेट की गड़बड़ी	ऐंटऐसिड
(र) घाव (साधारण)	चिपकने वाला टेप (सिलोफेन टेप) पट्टियाँ ऐंटीसेप्टिक रुई

24. नाक सटने पर बफारा लें।

25. जलने पर तुरन्त ठण्डे पानी या बर्फ़ में उस अंग को डुबो दें।

26. नींद लाने के लिए सोते समय गुनगुना दूध लें।

27. गले की खराश मिटाने के लिए एक चम्मच शहद पियें या नमकीन पानी का गरारा करें।

28. मोच आने पर बर्फ़ का इस्तेमाल करें।

29. नाक से रक्त निकलने पर ऊपरी होंठ को दबावें।

30. आपात स्थिति उत्पन्न होने पर घबड़ावें नहीं। पास का अस्पताल चुनें। निकटतम मार्ग से अस्पताल पहुँचे। ऐंबुलेंस की प्रतीक्षा न करके टैक्सी कर लें। डॉक्टर, अस्पताल, अग्नि स्टेशन, पुलिस, के फोन नम्बर अपने पास रखें।

31. असली चिकित्सा, आपात स्थिति, जिनमें तुरन्त उपचार की आवश्यकता होती है, (ABC) अ ब स के नाम से उसी क्रम में हैं—

(अ) श्वास रुकना, दुर्घटना तथा अंग काटना (Airway of abstructon, Accident, Amputation)

(ब) रक्त बहना, रक्त की क्षति, जलना (Bleeding, blood loss and burns)।

(स) हृदय रोग, उल्टी, दिल बैठना, (Cardiac Collapse and Convulsion) डॉक्टर इस क्रम से प्राथमिकता बरतते हैं।

स्मरण रहे कि आपके स्वास्थ्य के पाँच शत्रु हैं और पाँच ही आपके मित्र हैं।

शत्रु हैं—क्रोध, भय, ऊब, खिन्नता तथा पापभावना।

चिन्ता ज्वाल शरीर बन दावा लगि-लगि जाय,
प्रकट धुवाँ नहिं होत है उर अन्तर धुँधवाय।

मित्र हैं—उन्मुक्त हँसी, प्रेम या प्यार, आशा, उत्साह, आत्म विश्वास।

जिन बच्चों को अधिक प्यार मिलता है वे स्वस्थ रहते हैं बनिस्बत उनके जो प्यार से वंचित हैं।

जो पति अपनी पत्नियों के द्वारा अधिक दुलारे या आलिंगित होते रहते हैं उनकी आयु बढ़ती है बनिस्वत झगड़ालू व्यवहार होने के। आत्मविश्वास के बिना जीवन चला पाना दूभर है।

भोजन जीवन के लिए आवश्यक तो है, किन्तु आवश्यक मात्रा में ही। भोजन को चुंगना बेहतर है, बनिस्वत दो-तीन बार नियमित समय पर खाने के। घण्टे-घण्टे में भोज्य पदार्थ लेवें। बिना तली हुई वस्तुएँ, यानी ताज़ी वस्तुएँ खायें। वसायुक्त पदार्थों पर लपकें नहीं। अधिक वसा स्वास्थ्य के लिए हानिकर है।

□□

क्यों आते हैं भूकम्प ?

प्रेमप्रकाश व्यास

समस्त प्राकृतिक प्रकोपों में भूकम्प का स्थान सर्वोच्च कहा जा सकता है। विकसित एवं अविकसित देश इस आपदा से समान रूप से प्रभावित होते हैं। भूकम्प के अचानक आक्रमण से सारी व्यवस्थाएँ धरी रह जाती हैं और जान व माल की हानि का अन्दाजा लगाना कठिन हो जाता है। संभवतया भूकम्प वह विनाशलीला का एक रूप है जिस पर मानव को अभी काबू पाना असम्भव लग रहा है। बिना सूचना आने वाले इस विनाश के बारे में अभी और ज्ञान बढ़ाना पड़ेगा।

भूकम्प के अध्ययन को भूकम्पविज्ञान या 'सिज़्मोलॉजी' कहा जाता है जो एक यूनानी शब्द 'सिज़्मोज'

प्रधानाध्यापक, राष्ट्रीय माध्यमिक विद्यालय, जताई, बाड़मेर—344001

से बना है जिसका अर्थ है पृथ्वी का कम्पन। मानव की उत्पत्ति के बाद उसे जिन प्राकृतिक विपदाओं ने सर्वाधिक भयग्रस्त किया वे थीं बिजली का कड़कना, बाढ़ और भूकम्प। लाखों वर्षों तक इनका मूल कारण समझ में न आ सकने से मानव ने इससे कई अन्ध-विश्वास और मिथक जोड़ लिए। प्राचीन धर्मशास्त्रों पर इन अंधविश्वासों का असर देखा जा सकता है। प्राचीन हिन्दू धर्म की धारणा को ही लें जिसमें पृथ्वी को 'शेष नाग' के फन पर स्थिति माना है तथा उसके हिलने पर भूकम्प आने की बात कही गई है, जबकि जापान के लोग मछली के सिर पर पृथ्वी के रखे होने की बात करते हैं। प्राचीन यूनानी मतानुसार एटलस नामक देवता ने जब बिजली व गरज के देवता जिअस पर आक्रमण किया और हार गया तो दण्डस्वरूप उसे पृथ्वी को सर पर उठाना पड़ा, और थकने पर जब वह उस भार को थोड़ा बहुत हिलाता है, भूकम्प आते हैं। इन सभी परिकल्पनाओं में यह बात तो केन्द्रीय भाव में है ही कि पृथ्वी के भार से उत्पन्न तनाव को कम करने के लिए ही भूकम्प आते हैं।

उपरोक्त परिकल्पनाओं पर एक दृष्टि डालने से भले ही वे अवैज्ञानिक लगें, परन्तु गहराई पर इसमें कुछ वैधता लगती है। भूकम्प विज्ञानियों का मानना है कि पृथ्वी की भीतरी परत की चट्टानों को प्रत्या-स्थता में जब-जब भी बदलाव आता है, भूकम्प आते हैं। पृथ्वी का भीतरी भाग विशालकाय चट्टानों की प्लेटों से बना है तथा पृथ्वी के केन्द्र में होने वाली हलचल से वे प्लेटें खिसकती, टूटती या रगड़ती रहती हैं तथा भूकम्प आते रहते हैं। जिस स्थान पर उन प्लेटों पर तनाव सर्वाधिक होगा, भूकम्प केन्द्र वहीं होगा। इस भाग को 'एपिसेन्टर' कहा जाता है। बाकी भाग में भूकम्प की लहरें या तरंगें प्रसारित होती हैं, जो भूमि के भीतर चलती हुई केन्द्र के चारों ओर फैलती हैं। इस प्रकार पता चलता है कि भूकम्प चट्टानों के बीच उत्पन्न तात्कालिक तीव्र गतिमान परिवर्तन हैं जो उन पर लगातार पड़ने वाले तनाव या दबावों से उत्पन्न होते हैं। यह परिवर्तन चट्टानों को तोड़ता है और उससे अत्यधिक मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न होती है।

यह ऊर्जा चट्टानों को तोड़ देती है और अति-रिक्त ऊर्जा तरंगों के रूप में पृथ्वी में चलती है और उससे उत्पन्न गड़गड़ाहट व चटखने की आवाज़ भूकम्प का अनुभव कराती है। विनाश की प्रक्रिया इस ऊर्जा की मात्रा पर निर्भर करती है। कुछ भूकम्पविज्ञानियों के अनुसार पृथ्वी की भीतरी पपड़ी जो 30 से 200 किलोमीटर तक मोटी है, पृथ्वी की घूर्णन गति के कारण अपने स्थान से 1 से 5 से. मी. प्रतिवर्ष की गति से खिसकती रहती है, इसी प्रक्रिया से नए-नए पहाड़, नदियाँ व घाटियाँ बनती चली जाती हैं और समुद्रों के बीच द्वीप बनते रहते हैं। इस परिवर्तन से पपड़ी पर दबाव पड़ता है और उसी के कारण समय समय पर भूकम्प आते हैं।

भूकम्प का मापन करने में काम आने वाला यंत्र 'सिज़्मोग्राफ' या भूकम्पमापी कहलाता है। ई० पू० 132 में चीनी सभ्यता के लोगों ने भूकम्प मापने का यन्त्र बनाया था जिसकी सहायता से 600 किलो-मीटर दूर तक उत्पन्न भूकम्प का पता चल जाता था। और सन्देशवाहक से इसकी सूचना देकर लोगों को बचाया जाता था। आधुनिक 'सिज़्मोग्राफ' के आवि-ष्कार का श्रेय जापानी लोगों को जाता है जहाँ भूकम्प दैनिक जीवन का अंग है। आज से सौ वर्ष पूर्व बनाए गए इस यन्त्र में एक ठोस धातु पिण्ड पृथ्वी से कमानी से जुड़ा रहता है तथा पृथ्वी के भीतर उत्पन्न कम्पनों से कंपित होकर भूकम्प का मापन करता था, इसको अधिक परिष्कृत व जटिल रूप देकर 'सिज़्मोग्राफ' को काफी संवेदनशील बनाया गया है, जिसका उपयोग आजकल भूकम्पविज्ञानी करते हैं। इसकी सहायता से पृथ्वी के भीतर काफी दूर पर उत्पन्न कम्पनों को आवर्धित किया जा सकता है तथा उसकी उत्पत्ति के वास्तविक स्थान का पता भी लगाया जा सकता है। इस यन्त्र से न केवल भूकम्प का समय, स्थान या तीव्रता का बल्कि जिन चट्टानों में से होकर उसकी ऊर्जा तरंगें गुजरती हैं, उनका भी पता लगाया जा सकता

है। 1935 में सर रिचर ने एक भूकम्प मापन का पैमाना बनाया जो आज भी 'रिचर स्केल' के नाम से जाना जाता है। इसके मापन में भूकम्प से उत्पन्न ऊर्जा, भूकम्पीय तरंगों की आवृत्ति तथा तरंगों के केन्द्र से बढ़कर धीमे-धीमे क्षीण पड़ने की गति का उपयोग किया जाता है। इस पैमाने को अरबी अंकों में प्रकट किया जाता है जो शून्य से प्रारम्भ होकर अधिकतम 30 तक होती हैं। शून्य अंक की तीव्रता वाले भूकम्प से उत्पन्न ऊर्जा $2.2 \times 10''$ अर्ग है। आज तक मापे गए भूकम्पों में सर्वाधिक तीव्रता वाले भूकम्प को रिचर स्केल पर 8.9 मापा गया तथा उससे उत्पन्न ऊर्जा 5.6×10 अर्ग थी।

भूकम्प से उत्पन्न विनाश ही सर्वाधिक चिन्ता का विषय रहा है। इस विनाश का मापन भी एक पैमाने से किया जाता है जिसे 'मेडिफाइड मेरसेली स्केल' कहा जाता है। इसके अतिरिक्त एक अन्य पैमाना "एम० एस० के०" था। 'मेद्वेदेव-स्पोन हेबर कार्निक स्केल" भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त पैमाना है, जिसमें भूकम्प की तीव्रता का विभाजन रोमन अंकों में किया जाता है। न्यूनतम विनाशकारी भूकम्प को 1 से तथा अधिकतम विनाश को 12 से मापा जाता है। 1 से 5 तक तीव्रता वाले भूकम्पों को साधारणतया अनुभव किया जा सकता है। 6 अंक की तीव्रता वाले भूकम्पों में झटके अनुभव नहीं किये जा सकते हैं। हाल ही में अक्टूबर माह में दिल्ली में आया भूकम्प इसी श्रेणी में रखा जा सकता है, हालांकि यह भी विनाशकारी नहीं है। 7 से 10 अंक की तीव्रता वाले भूकम्पों में भवनों का गिरना, सड़कों का टूटना और रेल लाईनों का टेढ़ी-मेढ़ी होना आम बात है। गत वर्ष सोवियत रूस में आए भूकम्प इसी श्रेणी में रखे जा सकते हैं। 11 से 12 अंक की तीव्रता वाले भूकम्प सर्वाधिक विनाशकारी सिद्ध होते हैं। इससे भयानक उथल-पुथल हो सकती है। बांधों का टूटना, नदियों का प्रलयकारी रूप से रास्ता बदलना और शहरों का सम्पूर्ण विनाश जैसी घटनाएँ इस प्रकार के भूकम्पों से संभव हैं।

पृथ्वी पर कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जो भूकम्प से प्रभावित होते हैं और भूकम्प-विज्ञानियों द्वारा उन क्षेत्रों का वर्गीकरण भी किया गया है। उन्होंने पृथ्वी पर पाँच भूकम्प प्रभावित क्षेत्र खोजे हैं।

1. प्रशान्त महासागरीय पट्टी,
2. एल्पाइन हिमालयन पट्टी,
3. हिन्दमहासागरीय पट्टी
4. महाद्वीपीय विचलन के कारण पृथक हुए पू० अफ्रीका, यूरोप व राईन क्षेत्र व भारत का सतपुड़ा क्षेत्र, और
5. अफ्रीका, भारत, साइबेरिया व उसके पूर्व भाग

अधिकांश भूकम्प इन्हीं भागों में आते हैं।

भूकम्प और जलाशयों पर बने बाँधों पर भी गहरा सम्बन्ध देखा गया है। जहाँ पर भी बड़े-बड़े बाँध हैं तथा गहरे जलाशय हैं, वहाँ पर भूकम्पों की संख्या बढ़ जाती है जो दोहरे रूप से ख़तरनाक है। भूकम्प से हुई हानि के साथ बाँध टूटने पर आई बाढ़ की दोहरी मार भी उस क्षेत्र के लोगों को झेलनी होती है।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या भूकम्प की भविष्यवाणी कर इससे होने वाली जानमाल की हानि को रोका जा सकता है? प्राचीन चीनवासियों का मत था कि भूकम्प का पूर्वानुमान मनुष्य की अपेक्षा जन्तुओं को अधिक होता है। उन्होंने भूकम्प से कई घण्टों पूर्व भेड़ों के व्यवहार में आश्चर्यजनक परिवर्तन देखा। भेड़ों का कातरतापूर्वक चिल्लाना व दौड़ना भूकम्प की सूचना माना जाता था। भूकम्प के केन्द्र से उत्पन्न तरंगों को संभवतया जन्तु, मनुष्य से अधिक अनुभव कर सकते हैं। अब तक प्राप्त ज्ञान के आधार पर भूकम्प की भविष्यवाणी ज्यादा सही ढंग से कर पाना संभव नहीं हो पाया है। कई बार तो भविष्यवाणी की गई तथा लोगों को बचाया भी गया लेकिन अधिकांश मौकों पर अचानक आये भूकम्पों की भविष्यवाणी न तो की जा सकी न ही व्यक्तियों को बचाया ही जा सका। निश्चित ही भूकम्प आज भी वैज्ञानिकों के लिए एक ज़बर्दस्त चुनौती है। □□

विज्ञान वार्ता | संकलन : डॉ० अरुण आर्य

(1) नमक एवं उच्च रक्तचाप

खाने में नमक की अधिकता रक्तचाप को बढ़ाती है। उन संस्कृतियों में जहाँ नमक नहीं खाया जाता, मानसिक तनाव (हाइपरटेन्शन) बिलकुल नहीं होता। विभिन्न वैज्ञानिकों का मत है कि नेट्रीयूरेटिक हारमोन इसका एक कारण हो सकता है। यह हारमोन मूत्र में सोडियम आयन के स्राव को बढ़ाता है। विज्ञान (212 : 1255) में प्रकाशित शोध पत्र के अनुसार अत्यधिक नमक के उपयोग एवं उच्च रक्त चाप में निश्चित सम्बन्ध है।

रक्तचाप को बढ़ाने के अनेक कारक हैं यथा एन्जियो टेन्सिन और नोरेपाइन फाइन लेकिन हाइपर टेन्शन के एक ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक लेविस के० डाल के अनुसार इन कारकों के अलावा भी अन्य कई कारण हो सकते हैं।

नैट्रीयूरेटिक हारमोन के बारे में प्रथम प्रमाण आदमियों एवं जानवरों पर शोध के दौरान मिले। वैज्ञानिकों ने पाया कि जब जानवरों में रक्त की मात्रा को बढ़ाया गया तो वृक्क में सोडियम आयन स्राव की मात्रा में बृद्धि हुयी।

लेकिन यह बुद्धिमानी नहीं होगी कि हम नमक रहित भोज्य पदार्थों का सेवन करें क्योंकि यह पाया गया है कि स्वयं यह हारमोन उच्च रक्तचाप नहीं पैदा कर सकता जब तक कि आनुवंशिक रूप से मानव शरीर इस बीमारी के होने में सहायक न हो।

(2) पौधा जिसका प्रथम विश्व युद्ध में रुई की जगह मरहम पट्टी में प्रयोग किया गया

स्फैगनम (*Sphagnum*) मॉस (*Moss*) समूह का पौधा है जो कि रुई से भी अधिक पानी सोखने की शक्ति और प्रतिजैविक (एन्टीबायोटिक) गुणों के कारण शल्यक्रिया में उपयोग में लाया जाता है। जर्मन फौजों ने प्रथम विश्व युद्ध में मरहम पट्टी में इसका बहुतायत से प्रयोग किया (होटसन 1921)। ब्रिटिश, कनेडियन रेडक्रास एवं संयुक्त राज्य अमेरिका ने भी युद्ध के दौरान इसका उपयोग किया। पोर्टर (1917) के अनुसार स्फैगनम रुई से बेहतर है क्योंकि (1) यह द्रव को रुई से 3 गुना अधिक सोखता है, (2) यह रुई से 4 गुना अधिक पानी अपने में संजोये रख सकता है, (3) यह सोखे गये पदार्थों को समान रूप से अपने में फैला देता है, तथा (4) इसका पैदा किया जाना बहुत सरल है।

चीन में इस कार्य में जिन स्फैगनम प्रजातियों को प्रयुक्त किया गया है उनमें प्रमुख हैं स्फैगनम गिरगेन्सोहनाई, स्फैगनम मैजिलैनिकम्, स्फैगनम पलुस्ट्रे, स्फैगनम स्क्वैरोसम आदि।

(3) एजोस्पाइरीलियम : जीवाणु का बाह्य अवशोषण

डिजिटेरिया नामक पौधे से निकाले गये 'एजोस्पाइरीलियम लिपोफेरम डी-2' को, जौ की फ़सलों में लगाने से जौ की फ़सल में भारी वृद्धि हुयी। पौधे में कुल नाइट्रोजन की मात्रा में वृद्धि हुयी। इसी प्रकार मक्का से निकाले गये जीवाणु एम-2 के द्वारा भी जौ में वृद्धि पाई गयी। एम० एस० वि० वि० के प्रो० बी० बी० मोदी एवं उनके सहयोगियों ने अपनी इस खोज का ब्योरा 'करेन्ट साइंस' के अप्रैल, 1990 अंक में दिया है।

किसी भी मृदा-पादप वातावरण में एक विशेष प्रकार की सूक्ष्म जैविक प्रजातियाँ विकसित होती हैं। इन पर जड़ों द्वारा निकलने वाले स्रावों का प्रभाव होता है, जोकि सूक्ष्मजीवों के लिये कार्बन स्रोत का कार्य करते हैं। यह सूक्ष्मजीव बहुत से पौधों में अपना स्थान बना लेते हैं और लाभप्रद प्रभाव दर्शाते हैं।

बहुत से जीवाणु 'एजोस्पाइरीलियम समूह' के

प्रवक्ता, वनस्पति विज्ञान विभाग, विज्ञान संकाय, एम० एस० विश्वविद्यालय, बड़ौदा—390002 (गुजरात)

हैं। ये चारे वाली और दाने वाली घासों को अपना केन्द्र बनाते हैं और उनके राइजोस्फेयर (जड़ के पास से) आसानी से निकाले जा सकते हैं। ये पौधों की अधिक वृद्धि में सहायक हैं और साथ ही उनमें नाइट्रोजन-स्थिरीकरण (Nitrogen fixation) में भी सहायक हैं। और तो और और पादप हारमोनों को उत्पन्न करने में और धरती से अधिक पोषक तत्व खींचने (अपटेक) में मदद करते हैं।

(4) पौधे जिनमें तना व पत्तियाँ नहीं होतीं

सामान्यतया आवृतबीजी पौधों में जड़, तना व पत्तियाँ पायी जाती हैं, लेकिन कुछ ऐसे भी वृक्ष हैं जिनमें केवल जड़ें ही होती हैं। पोडोस्टेमेसी कुल के पौधों में थैलायड (फीते जैसी चपटी) जड़ें पायी जाती हैं जो प्रकाशसंश्लेषण करती हैं और जनन करती हैं। मेघालय के चेरापूँजी नामक स्थान में पाया जाने वाला **पोडोस्टीमॉन** (***Podostemon***) नामक पौधा ऐसा ही है। यह छिछले पानी में चट्टानों पर उगता है। इसकी जड़ों में ही समय-समय पर पुष्प निकलते हैं।

परजीवी पौधे **अरस्यूथोबियम रेफ्लेसिया** और **सापरिया** में फीता सदृश संरचनायें होती हैं जो पोषक तनों या जड़ों से जुड़ी रहती हैं। इनमें जनन के समय कलियाँ निकलती हैं जो छोटे (**अरस्यूथोबियम**) या बहुत विशाल (**रेफ्लेशिया**) फूलों को जन्म देती हैं।

मृतोपजीवी **मोनोट्रापा** के बीज स्वतन्त्र रूप से रहने वाली जड़ों को उत्पन्न करते हैं, जो बढ़ती और फैलती रहती हैं। कभी-कभी इनमें फूलों वाली शाखायें निकलती हैं और जनन करती हैं।

(5) शरीर का अधिक तापक्रम नींद में सहायक

सामान्यतया यह कहा जाता है कि जितनी अधिक देर तक आप नहीं सोते हैं उतनी ही अधिक नींद आती है। अब यह पाया गया है कि जब आप सोने जायें आपके शरीर का तापक्रम अधिक हो। यह परिणाम है उन प्रयोगों का जो 12 मनुष्यों पर 16 से 189 दिनों तक अलग-अलग किये गये।

हमारे शरीर के तापक्रम में दिन के 24 घण्टों में एक बार वृद्धि होती है और एक बार यह न्यूनतम होता है। **चार्ल्स ए जीस्लर और उनके सहयोगियों** ने पाया (Vigyan 210, 1267) कि जब वे व्यक्ति (सब्जेक्ट्स) उस समय सोने गये जबकि उनके शरीर के तापक्रम न्यूनतम थे तो $7\frac{1}{2}$ से 8 घण्टे के अन्दर उठ गये। ज्यादातर मनुष्य कम तापक्रम पर सो गये और तापक्रम बढ़ने पर उठ गये। लेकिन जब मनुष्य अपने शरीर के अधिकतम तापक्रम पर सोये वे 14 से 15 घंटे बाद सोकर उठे जबकि उनकी, रिकवरी नींद 11 से 16 घण्टे की थी।

(6) सोने की बीमारी में वृद्धि

एक परजीवी प्रोटोजोआ **ट्रिपेनोसोमा** पानी को चाहने वाली सी-सी मक्खी के द्वारा सोने की बीमारी फैलाता है, जो घातक भी हो सकती है। 1940 में किये गये प्रयासों से इस बीमारी को रोकने में मदद मिली लेकिन यह पुनः फैल रही है। 1940 में विक्टोरिया झील के किनारे के एक बड़े हिस्से को पूरी तरह खाली करा दिया गया। उगान्डा में यह बीमारी 1971 में फैली और 1979 में इसने भयानक रूप धारण कर लिया।

ट्रिपेनोसोमा को मारने वाली दवायें मनुष्यों के लिए भी घातक सिद्ध हो रही हैं। अब उगान्डा की एक वैज्ञानिक टोली इस बीमारी का पता लगाने के लिये नवीन तकनीक का प्रयोग कर रही है। 12 दिन के एक कैम्प में 406 नमूनों (रक्त समूहों) की जाँच की गई और उनमें से 140 को **ट्रिपेनोसोमा** से प्रभावित पाया गया।

लेकिन केवल रोग का पता लगाना ही काफी नहीं है, रोग का उपचार भी होना चाहिये। इस रोग की रोकथाम हेतु बहुत कम दवायें विकसित की गई हैं। यदि सब कुछ ऐसा ही रहता है तो झील के किनारे रहने वाले अफ्रीकियों को फिर सामूहिक रूप से वहाँ से निकालना होगा और उन्हें किसी दूसरी जगह आश्रय देना पड़ेगा। □□

प्रगति का द्वार—जैव प्रौद्योगिकी

अनिल वशिष्ठ

आज का सबसे चर्चित विज्ञान जैव प्रौद्योगिकी है। परखनली शिशु, बिना मिट्टी के पानी में खेती (हाइड्रोपोनिक्स), संतति सुधार की आनुवंशिकी (यूजेनिक्स), पादप कोशिका व ऊतक संवर्धन (टिशुकल्चर), संकर पादप प्रजातियाँ (हाइब्रिड स्पीशीज़), पेट्रो-फ़सल, बायोमास ऊर्जा, आनुवंशिक परिवर्तन आदि की महत्वपूर्ण तकनीक, जैव प्रौद्योगिकी पर आधारित है। जैव प्रौद्योगिकी द्वारा वांछित परखनली शिशु प्राप्त किये जा सकते हैं। ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा मात्र चार फुट स्थान पर स्वस्थ, जीवाणु प्रतिरोधक व अधिक उत्पादकता वाली पौध प्राप्त की जा सकती है। फलों के पौधों के सँकरीकरण द्वारा नये सुविधाजनक स्वादिष्ट फल वाले पौधे प्राप्त किये जा सकते हैं। अमेरिका में "नेक्टेरिन" नाम का बेर और आड़ू के सँकर द्वारा बना फल प्रचलित हो रहा है। इसी प्रकार मन चाहे फूल व पौधे प्राप्त किये जा रहे हैं। तेल वाली झीलों से **स्यूडोमोनास, क्लास्ट्रिडियम (शैवाल), माइकोबैक्टोरियम** (जीवाणु) को डालकर पेट्रोलियम प्राप्त किया जाता है। हंगरी, पोलैंड, रूस, अमेरिका व रूमानिया इस तकनीक द्वारा तेल प्राप्त कर रहे हैं। पेड़-पौधों के जैविक अपघटन द्वारा जैव ऊर्जा प्राप्त की जा रही है। जीवाणु द्वारा इंसुलिन का उत्पादन सम्भव हो सका है जो मधुमेह की बीमारी के निराकरण में उपयोगी सिद्ध हुई है। गुणसूत्रों (क्रोमोसोम) में एमिनो अम्ल के परिवर्तन द्वारा वांछित प्रोटीन, एन्ज़ाइम तथा हारमोन प्राप्त किये जा सकते हैं। पुनर्योजी (D N A) द्वारा सुरक्षित भेषज रस (वैक्सीन) बनाना आसान हो गया है। जल में संतुलित तत्वों का मिश्रण डालकर बिना मिट्टी के फ़सल प्राप्त की जा सकती है। जीवाणुओं द्वारा धातु निष्कर्षण, भ्रूणप्रत्यारोपण द्वारा विकसित जानवर व बच्चे प्राप्त करना, भारी उत्पादकता वाले रोगरोधी पौधे व जीवाणु से किण्वनीकरण द्वारा पालीसैकराइड, कार्बोहाइड्रेट द्वारा ग्लूकोज, फ्रक्टोस या ईथायल एल्कोहॉल प्राप्ति जैसे आश्चर्यजनक तथ्य जैव प्रौद्योगिकी द्वारा सम्भव हो सके हैं।

जैव प्रौद्योगिकी विज्ञान की वह शाखा है जिसमें जैव तन्त्र में आन्तरिक परिवर्तन द्वारा प्राप्त परिणामों का अध्ययन कर संतति सुधार किया जाता है। यह विज्ञान जीवविज्ञान, रसायन विज्ञान, भौतिकी, कृषि व वन विज्ञान, गणित, इंजिनियरी आदि के सामंजस्य का विज्ञान है।

भारत में जैव प्रौद्योगिकी के विकास के लिये राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी परिषद् (नेशनल बायो-टैक्नोलाजी बोर्ड) की स्थापना की गयी है। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर विभिन्न विद्यालयों में जैव प्रौद्योगिकी को स्वतन्त्र विषय के रूप में स्थापित किया गया है। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय; एम० एस० विश्वविद्यालय, बरोदरा; जवाहरलाल नेहरू विश्व-विद्यालय; मदुरई कामराज वि० वि०; पूना, गोआ, पन्तनगर व तमिलनाडु के विश्वविद्यालयों में इस विषय को स्नातकोत्तर की उपाधि तथा शोधकार्य हेतु रखा गया है। जादवपुर विश्वविद्यालय मे एम० टेक० हेतु जैव प्रौद्योगिकी विषय निर्धारित किया गया है। इस विषय में शोधकार्य के लिये स्नातकोत्तर स्तर से ही छात्रवृत्ति देने का प्रावधान है ताकि इस विषय में अधिकाधिक प्रतिभायें उभर कर सामने आ सकें।

जैव प्रौद्योगिकी की उपलब्धियाँ

कृषि के क्षेत्र में

जैव प्रौद्योगिकी द्वारा कृषि क्षेत्र में निरन्तर प्रगति हो रही है। केला, गन्ना, स्ट्राबेरी आदि, जिनमें वर्धीप्रजनन (क्लोनिंग) के माध्यम से गाँठयुक्त तने द्वारा फ़सल तैयार की जाती है या आलू व शकरकन्द

पोस्ट—घोड़ाखाल, जिला—नैनीताल, पिन—263156 (उत्तर प्रदेश)

जिसमें बल्ब द्वारा पौध तैयार की जाती है। ऐसी फ़सल हेतु उन्नत किस्म के रोगप्रतिरोधी पौधे जैव प्रौद्योगिकी में पुष्प, जड़, तना तथा ऊतक जैसे भ्रूण, बाह्य त्वचा आदि के संवर्धन द्वारा प्राप्त किये जा रहे हैं। संकरीकरण द्वारा फल-फूल व पौधों की उत्तम प्रजातियाँ प्राप्त करने में सफलता मिल रही है। मक्का की रस्ट प्रभाव मुक्त प्रतिरक्षा शक्ति वाली प्रजातियाँ जैव प्रौद्योगिकी द्वारा सम्भव हो पायी हैं। इस विशेष संकरीकरण को 'हाईब्रिडोमा' के नाम से जाना जाता है। बिना मिट्टी के पानी में नेपियर घास उगायी जा चुकी है।

वन विज्ञान के क्षेत्र में

इस क्षेत्र में जैव प्रौद्योगिकी द्वारा प्रतिकूल वातावरण में पनपने वाले पौधे तैयार किये जा रहे हैं। जैव ऊर्जा प्रौद्योगिकी द्वारा पेट्रो-फ़सल अर्थात पेट्रोलियम का विकल्प ढूंढने वाले व पेड़-पौधों के कूड़ा-करकट से जीवाणु अपघटन द्वारा ऊर्जा प्राप्त करने में सफलता मिल रही है।

रसायन के क्षेत्र में

इस क्षेत्र में भी आशातीत प्रगति हुई है। झीलों में बिखरे हुये तेल को जैव वृद्धि द्वारा तेल के पुन-एकत्रीकरण की तकनीक (आइक्रोबिल एनहान्समेंट ऑव ऑयल रिक्वरी) द्वारा पैट्रोलियम तेल एकत्र करने में भारी सफलता मिली है। धातु निष्कर्षण में जीवाणुओं का उपयोग किया जा रहा है। सागर में बिखरे तेल को जीवाणुओं द्वारा भक्षण कर प्रदूषण रोकने की दिशा में आंशिक सफलता मिली है। पेड़ों के मुख्य अवयव लिग्निन व सैलूलोज की जैवीय विघटन की विधियाँ विकसित की गयी हैं जिनका प्रयोग ग्लूकोज सीरप, फ्रक्टोज, मिथायल एल्कोहॉल व ईथायल एल्कोहॉल प्राप्त करने में किया जाता है। यदि इसमें पूर्ण सफलता मिली तो विश्व से ऊर्जा का संकट दूर हो जायगा।

आनुवंशिकी के क्षेत्र में

आनुवंशिकी में जैव प्रौद्योगिकी का भरपूर उपयोग किया गया है। पुनर्योजी डी एन ए तकनीक में गुणसूत्र निकाल कर या परिवर्तित कर वांछित प्रोटीन, हारमोन या रक्षालस (वैक्सीन), विभिन्न प्रकार के विचित्र गुण वाले पदार्थ प्राप्त किये गये हैं। भ्रूण विखण्डन, भ्रूण प्रत्यारोपण, क्लोनिंग, मनोक्लोनल एन्टीबाडी आदि तकनीकों द्वारा वांछित प्रजातियाँ, परखनली शिशु व रोगरोधकता आदि संभव हो सकता है। आनुवंशिक इन्जीनियरी के अन्तर्गत रोज नये-नये शोध हो रहे हैं।

पशु चिकित्सा विज्ञान में

भ्रूण प्रत्यारोपण की विधि द्वारा उन्नत किस्म की पशुओं की प्रजातियाँ प्राप्त की जा रही हैं। उन्नत किस्म की गायों की प्रजातियाँ इस तकनीक द्वारा ही संभव हो पायी हैं।

पादप विज्ञान के क्षेत्र में

पौधों की रोगाणु प्रतिरोधक क्षमता वाली उन्नत किस्में प्राप्त की जा रही हैं। मोनोक्लोनल एंटीबॉडी की सहायता से पौधों (फलीदार) द्वारा नाइट्रोजन को शोषित करने की क्षमता को बढ़ाया गया है।

चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में

जैव प्रौद्योगिकी द्वारा बीमारियों पर काबू किये जाने में भारी सफलता की संभावना है। पुनर्योजी डी एन ए तकनीक द्वारा मानव इंसुलिन, इंटर-फेरॉन तथा वृद्धि हारमोन प्राप्त किये गये हैं, जिससे बीमारियों से पूर तरह सुरक्षित रहा जा सकता है। विद्युत्-संकुचन चिकित्सा द्वारा भूख मिटाना, हँसना, गाना सभी कुछ वांछित हो गया है। माइक्रोटॉक्सिन उत्पादन कर शत्रुपक्ष की शक्ति नष्ट की जा सकती है, हालाँकि यह अमानवीय है। किन्तु युद्ध में यह जैव प्रौद्योगिकी द्वारा ही संभव हो पाया है। प्रदूषण रोकने, पर्यावरण को स्वच्छ रखने में भी जैव प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जा रहा है। औद्योगिक उच्छिष्टों का पुनर्चक्रण जीवाणुओं के माध्यम से किया जाता है। सीवेज को नदियों में प्रवाहित करने से पहले जीवाणुओं द्वारा अपशिष्ट का विघटन किया जाता है, जिसमें

बायोगैस तथा मैन्यूर केक (खाद) प्राप्त होता है। नदियों में मिलने वाले जल में जीवाणुओं की संख्या नगण्य होती है। शहर के कूड़ा-करकट व कचरे को नष्ट करने में सेनिटरी फिलिंग हेतु ऐसे जीवाणु खोजे जा रहे हैं, जिससे कचरा अतिशीघ्र विघटित हो जाए।

जैव प्रौद्योगिकी का मूल सिद्धान्त

कोशिकायें जीवन का मूलभूत आधार हैं। संरचना के आधार पर पादप व जन्तु कोशिका में विशेष अंतर नहीं है। पादप में रंजक पदार्थ (पिगमेंट) तथा सैलूलोज की कोशिकाभित्ती पायी जाती है, जिसका जन्तु कोशिका में अभाव होता है। जैव तंत्र में विस्थापन, निष्कासन तथा संयोजन तीन अवस्थाओं को रासायनिक पदार्थ, कोशिका व कायिकी में स्थापित करने पर सम्पूर्ण जैव तंत्र आश्चर्यजनक ढंग से परिवर्तित हो जाता है।

एमिनो अम्ल को परिवर्तित करने, जोड़ने या निकालने से रसायनिक परिवर्तन द्वारा जैव तंत्र परिवर्तित होता है। एन्ज़ाइम, हारमोन या नाभिकीय अम्ल (डी एन ए, आर एन ए के अवयव) में विस्थापन, संयोजन, वियोजन या निष्कासन से "जैव रासायनिक परिवर्तन" किया जाता है। "कोशिका की संरचना" में परिवर्तन द्वारा तथा "कायिकी" (उत्तक तंत्र) में परिवर्तन द्वारा जैवतंत्र को बदला जाता है।

जैव तंत्र में परिवर्तन द्वारा क्रान्तिकारी परिवर्तन संभव हुये हैं, जिससे बीमारियों के निराकरण, अधिक उत्पादन वाली रोगरोधी प्रजातियों को प्राप्त करने, प्रदूषण दूर करने, जैव ऊर्जा उत्पादन तथा अन्य विभिन्न क्षेत्रों में तीव्र विकास की संभावना बनी हैं। जैव प्रौद्योगिकी के परिणाम आश्चर्यजनक और उत्साहवर्धक हैं, जिसका आने वाले समय में भरपूर उपयोग होगा। आने वाले दशक में जैव प्रौद्योगिकी द्वारा कम लागत पर विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में प्रगति की संभावना है, जिससे पर्यावरण पर अधिक दबाव नहीं पड़ेगा और प्रदूषण की बढ़ती संभावना को नकारा जा सकेगा। ☐☐

राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रगति पथ पर

भूविज्ञान में राष्ट्रभाषा के माध्यम से शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत

डॉ० शिव गोपाल मिश्र

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के भूविज्ञान (जियोलॉजी) विभाग में प्रो० महाराज नारायण मेहरोत्रा के निर्देशन में श्री सच्चिदानन्द सिंह ने राष्ट्रभाषा के माध्यम से, "वाराणसी में गंगा प्रदूषण-अवसादिकीय अध्ययन" शीर्षक शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया, जिसकी परीक्षकों ने पी एच० डी० उपाधि के लिये संस्तुति करते हुये बड़ी प्रशंसा की है। उल्लेख है कि जियालॉजी विषय में राष्ट्रभाषा के माध्यम से प्रस्तुत किया जाने वाला यह द्वितीय शोध प्रबन्ध है। प्रथम शोध प्रबन्ध प्रो० मेहरोत्रा के निर्देशन में डॉ० राय अवधेश कुमार श्रीवास्तव ने, जो सम्प्रति वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान, देहरादून में वरिष्ठ वैज्ञानिक हैं, 1973 में प्रस्तुत किया था। ये शोधप्रबन्ध उच्चकोटि के हैं तथा प्रमाणित करते हैं कि राष्ट्रभाषा उच्चतम शिक्षा एवं शोध कार्यो के लिये सक्षम ही नहीं वरन् प्रभावशाली भी है।

श्री सच्चिदानन्द सिंह ने अपने प्रबन्ध में राष्ट्र की ज्वलन्त समस्या पर्यावरण प्रदूषण के एक अनुद्घरित पक्ष "अवसाद प्रदूषण" (सेडीमेंट पाल्यूशन) पर प्रकाश डाला है। अवसाद जलीय तन्त्र का अभिन्न अंग है जो प्रदूषक एवं अप्रदूषक दोनों ही रूपों में कार्य करता है। नदी में होंने वाली भौतिक, रासायनिक,

जैव-रासायनिक प्रक्रियाओं के कारण बहुत से पदार्थों, विषाक्त धातुओं आदि का जल से अवसाद में एवं अवसाद से जल में आदान-प्रदान संभव है जो जल कोटि को प्रभावित करता है।

उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में श्री सिंह ने वाराणसी क्षेत्र के गंगा अवसाद का अध्ययन कर उनमें विद्यमान विषालु धातुओं का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया है तथा उनकी विषद् विवेचना की है। तदनुसार घुरहा नाला नाला, मुख्य सीवर क्षेत्र, आदिकेश्वर घाट, अस्सी घाट तथा हरिश्चन्द्र घाट अपेक्षाकृत अधिक प्रदूषित हैं। इनमें सर्वाधिक प्रदूषित क्षेत्र घुरहा नाला में लेड; कॉपर, जिंक, क्रोमियम, निकैल, कोबॉल्ट की अधिकतम मात्रायें पायी गई हैं जो क्रमशः 800, 329, 258, 200, 130, 34 पी० पी० एम० है। ये धातुयें रामनगर स्थित बसन्त पेपर मिल तथा अन्य औद्योगिक क्षेत्रों से निकले बहिःश्राव के कारण है जो इस नाले द्वारा गंगा में लाई जाती है। इसके अतिरिक्त नगर की अधिकांश गंदगी ढोकर लाने वाले मुख्य सीवर के निकटवर्ती क्षेत्र के अवसाद में भी विषालु धातुओं की मात्रायें क्रमशः 186, 173, 73 21 एवं 9.8 पी० पी० एम० पाई गई हैं। ये मात्रायें औसत शेलमान में विद्यमान समकक्ष विषालु धातुओं की मात्रा से कई गुना अधिक हैं। यहाँ धातुओं के शोषण में अवसाद में विद्यमान कार्बनिक पदार्थ (1.5%) का महत्वपूर्ण योगदान है। यह शोध प्रबन्ध जल प्रदूषण पर कार्यरत विज्ञानियों के लिए प्रेरणादायक होगा तथा राष्ट्रभाषा के माध्यम से शोध कार्यों को प्रस्तुत करने को प्रोत्साहित करेगा। प्रो० महराज नारायण मेहरोत्रा और डॉ० सच्चिदानन्द सिंह को विज्ञान परिषद् परिवार की बधाई। □□

गणित शोध-प्रबन्ध हिन्दी में प्रस्तुत

डॉ० विजयेन्द्र कुमार

प्रोफेसर श्याम लाल सिंह जी से, उनके निर्देशन में शोधकार्य करने की अपनी प्रार्थना के उत्तर में उनका हिन्दी माध्यम से शोधकार्य करने का प्रस्ताव सुनकर मैं चकित रह गया था। मेरी प्रथम प्रतिक्रिया यह थी कि क्या यह सर्वथा सम्भव हो सकता है। लेकिन जब उन्होंने भारत सरकार द्वारा प्रकाशित वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली तथा मानक हिन्दी वर्तनी आदि का परिचय देकर हर सम्भव सहायता और मार्गदर्शन देने का आश्वासन दिया तो मुझे भी मातृभाषा की सेवा करने का गौरवपूर्ण बोध हुआ। अस्तु हिन्दी माध्यम से ही गणित में शोधकार्य करने का निश्चय किया गया। जहाँ तक मुझे ज्ञात है गणित विषय में हिन्दी माध्यम से शोधकार्य करने का यह प्रथम प्रयास था। शिव संकल्प के धनी प्रोफेसर श्याम लाल सिंह जी की सहायता से हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि में शोध प्रारूप तैयार हुआ तथा (हेमवती नन्दन बहुगुणा) गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर की डी० फिल० (गणित) उपाधि हेतु अक्टूबर 1986 में प्रेषित किया गया। विषय था, 'दूरीक और 2-दूरीक समिष्टियों में संपाती एवं स्थिर बिन्दु प्रमेय'। यह शोधप्रबन्ध अंततः अक्टूबर 1990 में तैयार कर जमा कर दिया गया।

इस कार्य के समापन में कठिनाइयाँ भी आईं। तकनीकी शब्दावली में भी कुछ शब्दों के हिन्दी तुल्य रूप नहीं दिए हुए थे। प्रोफेसर सिंह जी ने उन शब्दों के हिन्दी तुल्य स्वयं सुझाए तथा मानक वर्तनी के आधार पर एकरूपता की रक्षा के लिए वर्तनी के उपयोग की प्रेरणा दी।

पं० ललित मोहन शर्मा राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ऋषिकेश—249201

इस शोधप्रबन्ध में केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा स्वीकृत वर्तनी का उपयोग किया गया है। अतः प्रचलित वर्तनी के अभ्यासी विद्वानों को कुछ अटपटा सा लग सकता है पर आशा है कि सहृदय विद्वान वर्तनी की एकरूपता की रक्षा के लिए उठाए गए इस क़दम का स्वागत करेंगे। परिवर्तित वर्तनी के कुछ रूप इस प्रकार हैं—

पूर्व प्रचलित रूप	नव मान्य रूप
द्वितीय	द्‌वितीय
प्रारम्भिकी	प्रारंभिकी
यद्यपि	यद्‌यपि
विश्वविद्यालय	विश्वविद्‌यालय
सिद्धान्त	सिद्‌धांत

यद्यपि पूर्ण विराम चिह्न (।) को यथा स्थान प्रयुक्त करने का सुझाव दिया गया है परन्तु प्रस्तुत शोधप्रबन्ध में यह चिह्न प्रयोग करने पर भ्रम उत्पन्न होने की संभावना थी। अतः विराम चिह्न के स्थान पर चिह्न (·) का प्रयोग किया गया है।

प्रस्तुत शोधप्रबन्ध छह अध्यायों में विभाजित है। प्रथम अध्याय परिचयात्मक है। शेष पाँच अध्यायों में विभिन्न प्रतिचित्रण शर्तों के अधीन स्थिर बिन्दु प्रमेय सिद्ध किए गए हैं। इनका संक्षिप्त विवरण प्रथम अध्याय के अन्त में दिया गया है।

प्रस्तुत कार्य के प्रारम्भ से अन्त तक जिन लोगों से मुझे सहयोग प्राप्त हुआ है उन सबके प्रति मैं आभारी हूँ। इनमें से कुछ प्रमुख महानुभाव हैं—

प्रोफेसर पी० एस० थपलियाल (अध्यक्ष, गणित विभाग, हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर), डॉ० शिवगोपाल मिश्र (विज्ञान परिषद्, इलाहाबाद), प्रोफेसर विष्णु दत्त राकेश (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार), डॉ० गोपालकृष्ण सिन्हा (प्राचार्य, पं० ललित मोहन शर्मा राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ऋषिकेश)। मैं गुरुवर डॉ० श्याम लाल सिंह जी का चिर कृतज्ञ हूँ।

□□

एक रिपोर्ट

विज्ञान की भाव दिशाएँ : द्वि-दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी

डॉ० विजय मनचंदा

7-8 दिसम्बर, 1990 को प्रगत प्रौद्योगिकी केन्द्र, इन्दौर स्थित 'कल्याण केन्द्र सभागृह' में एक द्वि-दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद्, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, मुंबई ने इस कार्यक्रम का आयोजन राजभाषा कार्यान्वियन समिति, प्रगत प्रौद्योगिकी केन्द्र, के सहयोग से किया था। इस संगोष्ठी में देश के विभिन्न संस्थानों से आए लगभग 200 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसका उद्घाटन परमाणु ऊर्जा विभाग के वरिष्ठ वैज्ञानिक सलाहकार डॉ० माहेश्वर दयाल ने किया तथा इसकी अध्यक्षता प्रगत प्रौद्योगिकी केन्द्र के निदेशक डॉ० डी० डी० भवालकर ने की। इस कार्यक्रम में 13 समकालीन वैज्ञानिक विषयों पर वार्ताएँ प्रस्तुत की गईं।

रेडियो रासायनिकी प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, ट्राम्बे, बम्बई—400085

विज्ञान ने हर युग में समाज एवं संस्कृति पर एक अमिट छाप छोड़ी है। 20वीं शताब्दी में आधुनिक विज्ञान के विकास द्वारा मानव जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन आए हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वैज्ञानिक विकास की तीव्र प्रक्रिया द्वारा सम्पूर्ण मानव जाति एक पारिवारिक घनिष्ठता अनुभव करने लगी है। इस विश्व रूपी समाज में शांति एवं उन्नति का मार्ग प्रशस्त करने के लिए हर सदस्य–राष्ट्र का योगदान आवश्यक है। राष्ट्रीय सन्दर्भ में, जहाँ एक ओर वैज्ञानिक समुदाय द्वारा अपने प्रयासों को सामाजिक दृष्टि से संगत बनाना आवश्यक है, वहाँ दूसरी ओर शिक्षाशास्त्रियों तथा अन्य बुद्धिजीवियों द्वारा वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रचार-प्रसार में सहयोग भी अपेक्षित है। आशा है यह संगोष्ठी, सक्रिय वैज्ञानिकों तथा शिक्षक समाज के बीच एक अटूट कड़ी सिद्ध होगी।

इस संगोष्ठी में देश के कुछ प्रमुख सक्रिय वैज्ञानिकों को आमंत्रित किया गया है। अपने कार्य क्षेत्र सम्बन्धी उनका सरल हिन्दी में प्रस्तुतीकरण प्रतिभागियों के लिए एक दुर्लभ अवसर था। संगोष्ठी के विषय का चुनाव दो दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण था। सर्वप्रथम हिन्दी के माध्यम से विज्ञान की प्रगति में रुचि रखने वाले शिक्षक समाज तथा सक्रिय वैज्ञानिकों के बीच एक वार्त्तालाप का शुभारम्भ करना। दूसरी ओर 22वीं शताब्दी में पदार्पण की दृष्टि से संगत विशिष्ट वैज्ञानिक विषयों की चर्चा के लिए एक मंच प्रदान करना।

हाल ही में प्रधानमंत्री द्वारा गठित वैज्ञानिक सलाहकार समिति की एक रिपोर्ट प्रकाशित हुई है। इसमें अनुसंधान एवं विकास की दृष्टि से वर्ष 2001 ई० में महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों का उल्लेख किया गया है। संयोगवश इनमें से अधिकतर विषयों पर इस संगोष्ठी में चर्चा हुई।

आधुनिक युग में किसी भी देश का विकास उसकी ऊर्जा उत्पादन की क्षमता पर निर्भर करता है। "नाभिकीय ऊर्जा", "संलयन ऊर्जा" तथा "ऊर्जा के अपरम्परागत स्रोत" जैसे विषयों पर इस संगोष्ठी में वार्त्ताओं का आयोजन किया गया। जहाँ एक ओर परमाणु ऊर्जा विभाग द्वारा वर्ष 2000 ई० तक नाभिकीय ऊर्जा उत्पादन 10,000 मेगावाट तक बढ़ाने की योजना है, वहाँ दूसरी ओर, इस बात के प्रबल संकेत हैं कि निकट भविष्य में संलयन ऊर्जा, पवन ऊर्जा, सौर ऊर्जा तथा गोबर गैस जैसे ऊर्जा के अपरंपरागत स्रोत व्यावसायिक दृष्टि से अधिक प्रभावकारी सिद्ध होंगे।

विज्ञान के बढ़ते कदमों की आहट "दूरसंचार" द्वारा पूरे विश्व में स्पष्ट सुनाई दे रही है। "कम्प्यूटर जैसे विषय की किसी भी वैज्ञानिक संगोष्ठी द्वारा अवहेलना करना असम्भव है। कम्प्यूटर का उपयोग अब केवल अनुसंधान प्रयोगशालाओं तक ही सीमित नहीं, बल्कि जीवन के हर मोड़ पर ये प्रमुख भूमिका निभा रहे हैं। इन विषयों पर संगोष्ठी मे रोचक वार्त्ताएँ हुईं।

"लेसर" के रूप में वैज्ञानिकों ने एक अनोखे प्रकाश स्रोत से हमारा परिचय कराया है। अपनी एक वर्णता, संबद्धता तथा उच्च प्रदीप्ति जैसे गुणों से "लेसर" वैज्ञानिक, तकनीकी एवं सुरक्षा के क्षेत्रों में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुए हैं। इसी प्रकार "त्वरिक" भी तीव्र गति से विभिन्न क्षेत्रों में अपनी उपयोगिता सिद्ध कर रहे हैं। विशेष रूप से पदार्थ विज्ञान, न्यूक्लीय भौतिकी तथा चिकित्सा विज्ञान इत्यादि में त्वरिकों का प्रयोग कुशलतापूर्वक किया जा रहा है। हाल ही में "उच्च ताप अतिचालकों" की खोज से वैज्ञानिक अनुसंधान जगत् में क्रांति आई है। इस दिशा में हो रहे आधारभूत एवं अनुप्रयुक्त प्रयासों की एक झलक इस संगोष्ठी में दिखाई पड़ी।

"खगोल भौतिकी" के क्षेत्र में अन्तरिक्ष में परिक्रमा करते हुए दूरदर्शकों द्वारा उच्च ऊर्जा स्रोतों की सृजन सम्बन्धी जानकारी में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। आधुनिक युग में "प्रक्षेपास्त्र कार्यक्रम" का सुरक्षा की दृष्टि से एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। ऊर्जा की भाँति "बहुलक पदार्थों" की खपत भी किसी राष्ट्र की प्रगति का द्योतक बन गया है। भारत में भी रासाय-

निक उद्योग में आने वाले 15 वर्षों में 70,000 करोड़ रु० लगने का अनुमान है। विज्ञान की अमिट छाप केवल निर्जीव जगत् तक ही सीमित नहीं; प्राणी-जीव रचना सम्बन्धित विस्तृत जानकारी भी अब वैज्ञानिक अनुसंधान द्वारा उपलब्ध हो चुकी है। "आनुवंशिक विज्ञान" द्वारा किसी भी जीव के डी एन ए में परिवर्तन करके उसकी संतति के गुणों में परिवर्तन किया जा सकता है। दूसरी ओर "बृहतचक्रीय रसायन" मानव शरीर में होने वाली जैव रासायनिक क्रियाओं को समझने में सहायक सिद्ध हुए हैं।

निश्चित ही जन भाषा हिन्दी के माध्यम से विज्ञान के विकास में गति तीव्र की जा सकती है। कुछ वर्ष पूर्व प्रकाशित INSA की एक रिपोर्ट में 8वीं शताब्दी से ही विभिन्न वैज्ञानिक विषयों पर संस्कृत, अरबी तथा पारसी में प्रकाशित हुए लेखों का ब्यौरा दिया गया है। ये आँकड़े अत्यन्त प्रभावकारी हैं। आशा है कि इस राष्ट्रीय संगोष्ठी में वरिष्ठ वैज्ञानिकों की वार्ताएँ प्रतिभागियों को भी हिन्दी में शोध पत्र या अन्य लेख लिखने के लिए प्रेरित करेंगी।

इस संगोष्ठी में डॉ० डी० डी० मवालकर, डॉ० माहेश्वर दयाल, श्री वी० आर० श्री निवासन, श्री जे० सी० मोंगा, डॉ० यक्षमी, श्री एच० के० कोश, डॉ० एम० एस० सोढ़ा, डॉ० आर० वी० नाडेकर, मेजर जनरल वी० जे० सुन्दरम, प्रो० पी० सी० अग्रवाल, प्रो० ओ० सिद्दीकी, प्रो० एन० एस० पूनिया, श्री एस० एन० व्यास, डॉ० वी० के० मनचंदा एवं अनेक वैज्ञानिकों सहित लगभग 200 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। □□

[इस संगोष्ठी में प्रस्तुत आलेख "वैज्ञानिक" पत्रिका के विशेषांक के रूप में प्रकाशित हो चुके हैं।

—सम्पादक]

परिषद् का पृष्ठ

'खाड़ी युद्ध का पर्यावरण पर प्रभाव' विषय पर प्रतियोगिता सम्पन्न

गत 22 फरवरी को विज्ञान परिषद् एवं वनस्पति विज्ञान विभाग सी० एम० पी० डिग्री कॉलेज (महिला शाखा) के तत्वावधान में 'खाड़ी युद्ध का पर्यावरण पर प्रभाव' विषय पर लेख वाचन प्रतियोगिता सम्पन्न हुई। निम्नलिखित को पुरस्कार प्राप्त हुए—

बी० एस-सी० तृतीय वर्ष वर्ग

संगीता मेहरोत्रा–प्रथम, श्रद्धा मिश्रा–द्वितीय

बी० एस-सी० द्वितीय वर्ष वर्ग

सोमलता साहू—प्रथम, शगुफ्ता नकवी—द्वितीय

बी० एस-सी० प्रथम वर्ष वर्ग

अलका खाती—प्रथम, फरहा दीवा—द्वितीय, अमन सक्सेना—तृतीय

सीमा फरहत एवं अंजू गोस्वामी को सांत्वना पुरस्कार।

मुख्य अतिथि **प्रो० जी० एन० राय चौधरी** ने पुरस्कार विजेताओं को बधाई दी और इस प्रकार के कार्यक्रमों को आयोजित करने पर विशेष बल दिया। **श्री आर० सी० श्रीवास्तव, डॉ० वीरेन्द्र लाल** और **डॉ० विनोद कुमार श्रीवास्तव** निर्णायक रहे। अन्त में आयोजक और संचालक **प्रेम चन्द्र श्रीवास्तव** ने सभी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित की।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के नए आयाम

डॉ० श्रवण कुमार तिवारी

गत 7, 8, 9 फरवरी 1991 को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में, भौतिकी-कक्ष तथा विज्ञान संकाय के संयुक्त तत्वाधान में हिन्दी में एक विज्ञान संगोष्ठी का सफल आयोजन किया गया। प्राय: यह कहा जाता है कि हिन्दी में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विषयों का प्रतिपादन कठिन होता है और शब्दावली की समस्या आड़े आती है। यह संगोष्ठी बहुत कुछ इसी आशंका को निर्मूल सिद्ध करने के लिए की गई थी। व्यापकता को बढ़ाने के विचार से उसमें विज्ञान, कृषि विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान तथा गणित आदि समस्त विषयों को शामिल किया गया था और इसका शीर्षक रखा गया था : "विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के नए आयाम"। यह कितने उत्साह की बात है कि इस संगोष्ठी में भाग लेने के लिए देश के कोने-कोने से अनेक वैज्ञानिकों तथा शोध कर्मियों ने 115 प्रविष्टियाँ भेजीं। राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला, दिल्ली, राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाल पूना, विक्रम साराभाई अंतरिक्ष अनुसंधान केन्द्र, त्रिवेन्द्रम, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, बम्बई, राष्ट्रीय पर्यावरण अभियांत्रिकी अनुसंधान संस्थान, नागपुर, केन्द्रीय भवन अनुसंधान संस्थान, रुड़की, औद्योगिक विष विज्ञान अनुसंधान केन्द्र, लखनऊ, केन्द्रीय ईंधन अनुसंधान संस्थान, धनबाद, केन्द्रीय नमक एवं समुद्री रसायन संस्थान, भावनगर, अंतरिक्ष उपयोग केन्द्र, अहमदाबाद, तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग, देहरादून, दूर संवेदन उपयोग केन्द्र, झांसी आदि संस्थानों से तो अनेक वैज्ञानिकों ने भाग लिया ही, पटना, गोरखपुर, इलाहाबाद, लखनऊ, कानपुर लुधियाना, रुड़की, दरभंगा आदि विश्वविद्यालयों से भी अनेक प्राध्यापकों तथा शोध-कर्मियों ने भाग लिया। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के विभिन्न संकायों से तो लगभग 70 वैज्ञानिकों ने इस संगोष्ठी में अपने व्याख्यान प्रस्तुत किए। पर्यवेक्षकों के रूप में भाग लेने वाले अनेक लोगों ने इस संगोष्ठी की सराहना की।

संगोष्ठी में प्रस्तुत किए गए विषय भी अत्यन्त रोचक, सामयिक और ज्ञानवर्द्धक थे। संगोष्ठी का शुभारम्भ प्रो० अजित राम वर्मा के व्याख्यान से हुआ जो अत्यन्त रोचक रहा, विषय था—"हीरा, एक विलक्षण पदार्थ"। हरित पट्टी एवं वायु प्रदूषण निवारण, शीत-संलयन के नवीनतम क्षेत्र, चिकित्सा एवं अनुसंधान में विकिरण के बढ़ते चरण, खनिजों का स्वास्थ्य पर प्रभाव, आधुनिक कीट विज्ञान का पर्यावरण अनुसंधान में योगदान, उड़न राख का उत्पादन तथा उपयोग, हृदय रोग नियन्त्रण का औषधियाँ, पर्यावरण, पारिस्थितिक तंत्र एवं मानव संतति, परमाणु, अणु और अन्तरिक्ष, प्रकाश-ऊष्मीय स्पेक्ट्रॉस्कोपी, हड्डी के रोगों में कैल्शियम की असाध्यता, आसुत जल की समस्या का सरल समाधान, मौसम परिवर्तन एवं ग्रीन हाउस प्रभाव, सौर ऊर्जा का भण्डारण आदि अनेक सामयिक विषयों पर अत्यन्त सरल एवं सुबोध हिन्दी भाषा में अत्यन्त रोचक व्याख्यान प्रस्तुत किए गए जो इस तथ्य को उजागर करते हैं कि हिन्दी में विज्ञान एवं तकनीकी के तमाम विषयों पर सरल एवं बोधगम्य व्याख्यान प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के अनेक विषयों पर तो व्याख्यान प्रस्तुत किए ही गए, वैज्ञानिक एवं तकनीकी हिन्दी के विकास पर भी सार्थक चर्चा की गई। एक

उपनिदेशक, हिन्दी सेल, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी—5

सत्र इसी विषय पर विचार-विमर्श करने के लिए रखा गया था। इस सत्र में गोरखपुर विश्वविद्यालय तथा इन्दौर विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति प्रो० देवेन्द्र शर्मा ने "वैज्ञानिक हिन्दी, एक विहंगम दृष्टि" विषय पर अत्यन्त उपयोगी व्याख्यान प्रस्तुत किया। इन व्याख्यानों में, वैज्ञानिक एवं तकनीकी हिन्दी का स्वरूप, विज्ञान लेखन में हिन्दी के प्रयोग की कठिनाइयाँ तथा वैज्ञानिक हिन्दी : अविरत विकास की आवश्यकता, आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय रहे।

कुल मिलाकर संगोष्ठी अत्यन्त सफल रही। इसका संयोजन प्रो० देवेन्द्र कुमार राय तथा डॉ० श्रवण कुमार राय ने किया था। संगोष्ठी में प्रस्तुत किए गए व्याख्यानों को एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया जाना है। निश्चय ही यह प्रकाशन एक उपयोगी संकलन होगा।

□□

विज्ञान के बढ़ते कदम

विनीता शुक्ला एवं संजय शुक्ला

(1) तम्बाकू के निरर्थक भाग से एक नया कीटनाशक

केन्द्रीय तम्बाकू अनुसन्धान संस्थान, राजाहमुन्द्री, आन्ध्र प्रदेश के वैज्ञानिकों ने तम्बाकू के निरर्थक भाग से एक नया, अधिक प्रभावशाली एवं सुरक्षित कीटनाशक 'निकोटिन सल्फेट' प्राप्त किया है। यह कीटनाशक उन हानिकारक कीटों के विरुद्ध अधिक प्रभावी है जो आर्गेनोक्लोरीनों, आर्गेनोफॉस्फेटों और कार्बेमेटों जैसे रासायनिक कीटनाशकों का प्रतिरोध करते हैं।

चने की फली में छेद करने वाले (हीलियोथिया आर्मिजेरा) अण्डा और डिम्ब दोनों अवस्थाओं में, श्वेत भक्षी (बेमिसिया टेबैसी), अर्ध-कुण्डल इल्ली (स्पॉडेप्टेरा लिट्यूरा) और विविध भक्षी हानिकारक कीटों की रोकथाम के लिए यह विशेष रूप से प्रभावशाली पाया गया है।

यह उत्पाद न तो मनुष्य के स्वास्थ्य पर और न ही पर्यावरण पर कोई दुष्प्रभाव डालता है। पाँच मि० ली० निकोटिन सल्फेट को एक लीटर पानी में मिलाकर हानिकारक कीटों को तीन से सात दिन के अन्दर मारा जा सकता है।

(2) वर्षा पर ज्वालामुखी का प्रभाव

पिछले 113 वर्षों के वर्षा के आँकड़े और ज्वालामुखी-विस्फोट दर्शाते हैं कि ज्वालामुखी गतिविधि वर्षा को प्रभावित करती है।

अंतरिक्ष अनुप्रयोग केन्द्र (एस० ए० सी०) के मौसम विज्ञान और समुद्र विज्ञान प्रभाग द्वारा किया गया अध्ययन दर्शाता है कि औसत वर्षा से कुछ ज्यादा से उच्च अक्षांश विस्फोट अधिक संबद्ध होते हैं। निम्न अक्षांश विस्फोट न्यूनतम वर्षा से संबन्धित होते हैं। भूमण्डलीय विस्फोट आँकड़े सन् 1872 से 1952 तक के हैं।

अध्ययन के विभिन्न श्रेणियों के ज्वालामुखी विस्फोटों का वर्षा की तुलना में अनियमित संपात की प्राथिकता यह मानकर परिकलित की गई कि दोनों प्रक्रियायें प्रकृति में अनियमित हैं और एक दूसरे पर कोई प्रभाव नहीं डालती हैं। इसके फलस्वरूप प्राप्त विशिष्ट संयोग की वास्तविक संख्या का प्रत्याशित संगत संख्या से तुलनात्मक अध्ययन किया गया।

ज्वालामुखी द्वारा वातावरण में अन्तःक्षेपित वायु विलय समतापमण्डल में पहुँचकर सौर-आयतन को क्षीण करते हैं। यह सतही ताप-प्रवणताओं को कम करता है।

वैज्ञानिकों का अध्ययन इस कल्पना पर आधारित था कि ऊष्मा अभिगमन में परिवर्तन भूमण्डलीय मौसम पर असर डाल सकता है। सम्भवतः भारतीय मानसून पर अधिक।

ए—6 चैथम लाइन्स, टीचर्स कॉलोनी, इलाहाबाद—211002

चूंकि निम्न अक्षांशीय वायु-विलयों को पृथ्वी के चारों ओर फैलने में कुछ सप्ताह ही लगते है, अतः यदि बताए गए वर्ष में जुलाई तक विस्फोट होते हैं, तो वे उसी वर्ष अगस्त और सितम्बर के पूर्वार्द्ध में भी मानसून पर असर डाल सकते हैं। फिर भी उच्च अक्षांशीय वायु-विलय पृथ्वी के चारों ओर फैलने में कुछ महीने ले लेते हैं। इसलिए जून में या उसके बाद हुआ कोई विस्फोट उस वर्ष के मानसून पर कोई असर नहीं डाल सकता है। लेकिन वैज्ञानिकों के मतानुसार, आने वाले वर्ष को प्रभावित कर सकता है।

वैज्ञानिकों ने ज्वालामुखी की स्थिति और विस्फोट के समय पर आधारित होकर उन्हें चार भागों में बाँटा है। वर्षा के औसत वर्षा मान के अक्षान्तर पर आधारित होकर वर्षा को भी चार श्रेणियों में विभक्त किया गया है।

(3) छली गुरुत्व तरंगों का आखेटन

सात दशकों पहले आइन्स्टीन द्वारा प्रागुक्त अंतरिक्ष में छली गुरुत्व तरंग-अभिकाओं की खोज में विश्व के कई वैज्ञानिक आज भी जुटे हुए हैं और अभी तक इन तरंगों से अनभिज्ञ हैं। यदि भारतीय वैज्ञानिकों को कुछ आर्थिक सहायता प्राप्त हो जाय तो वे भी दुनिया के उन वैज्ञानिकों की श्रेणी में आ सकते हैं जो इन तरंगों की खोज में संलग्न हैं।

1990 के प्रारम्भ में इन्दौर के अग्रगत तकनीकी केन्द्र में गुरुत्व तरंग संसूचक पर एक विशेष वर्कशाप का आयोजन किया गया था जिसमें गुरुत्व तरंग, संसूचक के प्राविधिक घटकों के अध्ययन के बाद यह निष्कर्ष निकाला गया कि इसे भारत में ही लगाया जाए। यह अध्ययन पूना के खगोलिकी और खगोल भौतिकी के अन्तर विश्वविद्यालय केन्द्र द्वारा समन्वित भौतिक विज्ञानियों की एक टीम द्वारा किया गया था।

आइन्सटीन के आपेक्षिकता के सामान्य सिद्धान्त (1915 में प्रकाशित) के अनुसार गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र में गुरुत्व तरंगें विद्युत्-चुम्बकीय क्षेत्र की तरंगों सदृश होती हैं और अन्तरिक्ष-समय के स्वरूप को गुरुत्व से सम्बन्धित करती हैं।

विश्व के चार बलों में गुरुत्व सबसे क्षीण है और गुरुत्व तरंगें इतनी क्षीण हैं कि केवल अत्यधिक शक्तिशाली प्रक्रिया ही तरंग उत्पन्न कर सकती है। वर्तमान समय में यह तकनीक पृथ्वी पर स्थिर प्रयोगशालाओं में संसूचित हो सकती है। खगोल विज्ञानियों का मत है कि ये प्रक्रियाएँ पृथ्वी पर प्रायः अन्यत्र भी हो सकती हैं।

तारे स्वयं के गुरुत्वीय कर्षण से निपातित होकर इतने सघन हो जाते हैं कि प्रकाश तक उनसे नहीं निकल पाता है। संस्थूल तारे, जो गुरुत्व तरंगों का एक उत्कृष्ट स्रोत हो सकते हैं, अपने अन्त समय में ब्लैक-होल में निपातित हो जाते हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार जब एक तारा ब्लैक-होल की तरह मुड़ता है तब वह अत्यधिक मात्रा में गुरुत्वाकर्षण तरंग ऊर्जा छोड़ता है। इसके बाद भी ब्लैक-होल गुरुत्व तरंगों का स्रोत बना रहता है, क्योंकि वह परिवेशित द्रव्य को आकर्षित और ध्वनि करते हुए घेरने लगता है।

गुरुत्व तरंगों की अपेक्षा करने का मतलब गुरुत्व तरंग संसूचकों के लघु कम्पनों की अपेक्षा करना है जो कि धातु की छड़ भी हो तकते हैं। जैसे ही गुरुत्व तरंग धातु से टकराती है, छड़ कम्पायमान हो जाती है। गुरुत्व तरंगों की खोज के साथ ऐसी तकनीक की खोज भी सम्मिलित है जो भौतिक विज्ञानियों को इस प्रकार की छड़ के विस्तार में बदलाव के बारे निर्देशित करे क्योंकि ये छड़ एक मीटर के अरबों भाग से भी कम होती है।

अमेरिका की मेरिलैण्ड यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर जे० वेबर ने पहला गुरुत्व तरंग संसूचक बनाया था। इन्होंने एल्यूमीनियम की बेलनाकार छड़ का उपयोग संसूचक के रूप में किया था। सत्तरवें दशक के आरम्भ में प्रो० वेबर ने बताया कि उन्होंने गुरुत्व तरंग संकेत प्राप्त किए हैं। लेकिन भौतिक वैज्ञानिकों ने कहा कि ये संकेत परवर्ती अनुसंधान द्वारा सम्पुष्टित नहीं हैं।

लेकिन पिछले कुछ वर्षों से अनुसंधायक एक नए प्रकार के उपकरण पर कार्य कर रहे हैं जो पिछले संसूचकों से अधिक सूक्ष्मग्राही बनाया गया है। यह एक 'एल' रूपी लेसर इन्टर्फोमीटर प्रणाली है जिसमें लेसर दण्ड समकोण पर रखे, तीन दर्पणों को उच्छलित करके एक व्यक्तिकरण प्रतिरूप पैदा करते हैं। गुरुत्व तरंगों के इन्टर्फोमीटर से टकराने पर व्यक्तिकरण प्रतिरूप बदल जाता है।

भारतीय वैज्ञानिकों का पाँच सदस्यीय समूह गुरुत्व तरंग संसूचक के कई प्रामाणिक तकनीकी घटकों का सुसंगत अध्ययन कर रहा है। इनमें लेसर, वेक्यूम तकनीक भूकम्पी वियोजन तन्त्र आदि शामिल हैं।

भूकम्पी वियोजन गुरुत्व तरंग संसूचक की मुख्य आवश्यकता है, क्योंकि भूकम्पी तरंगें संभावितगुरुत्व तरंगों को ग्रहण कर सकती हैं। तरंगों के स्वयं के कारण हुए कम्पनों से काफी वृहत्तर कम्पनों को प्रेरित करके ऐसा हो सकता है।

गुरुत्व तरंग केन्द्रों में संभावित गुरुत्व तरंगें खगोल विज्ञानियों के लिए रुचि का विषय है और यह विश्व के लिए नई खोज के गवाक्ष प्रस्तुत कर सकती हैं। खगोल विज्ञानी ब्रह्मांड के अन्वेषण में रूढ़िवादी रूप से विद्युत्-चुम्बकीय तरंगों, दृश्य, अवरक्त और रेडियों तरंगों पर आश्रित रहा करते थे। लेकिन, क्योंकि ये ज्योति पदार्थ से आसनी से पार नहीं हो सकती इसलिए इनके द्वारा लाई गई सूचना किसी लक्ष्य के सतही लक्षण तक ही सीमित रहती है। किन्तु गुरुत्व तरंगें घने पदार्थ से सूचना दे सकती हैं।

खगोल विज्ञानियों के विचार से गुरुत्व तरंग दूरबीन अधिनवतारा विस्फोट, तारों का निपात, ब्लैक-छिद्रों का संघटन और न्यूट्रॉन तारों जैसे कम सम्यकबोध प्रक्रियाओं का विस्तार बता सकती है।

(4) क्रोधित मधुमक्खियाँ बनाम ज्यादा शहद

सोवियत संघ के विज्ञान व प्रौद्योगिक विभाग से सम्बन्धित एक अधिकारी, जो कि अब अवकाश ले चुका है, ने एक आश्चर्यजनक व दिलचस्प किन्तु सत्य तथ्य प्रस्तुत किया है। मधुपालन के वैज्ञानिक तरीके के इस सलाहकर का कहना है कि मधुमक्खियाँ ज्यादा क्रोध में होने पर अधिक शहद का उत्पादन करती हैं।

मधुमक्खियों के छत्तों को किसी तरह से क्षति पहुँचे और इसके परिणामस्वरूप छत्तों के किसी चौकोर गृहखण्ड से शहद रिसने लगे तो मक्खियाँ आवेश में आकर ज्यादा से ज्यादा शहद इकट्ठा करने में जुट जाती हैं। मधुपालन व मधु उत्पादक व्यवसाय से जुड़े इस विशेषज्ञ के अनुसार उनकी इस आदत का फ़ायदा उठाकर ज्यादा से ज्यादा शहद इकट्ठा किया जा सकता है। गुस्से से उपजे इस शहद को एकत्र करने के लिये उनके छत्तों के कुछ ही खण्डों में छिद्र करना चाहिये। अधिक में छिद्र करने से मधुमक्खियाँ छत्ता छोड़कर भाग सकती हैं। इस तरह अधिक लालच का नतीजा शून्य में बदल सकता है। मधुमक्खियों के क्रोध से उपजे इस शहद को प्राप्त करने का एक तरीका और भी है कि उनके छत्तों के दो हिस्सों को सावधानी-पूर्वक अलग करके बारी-बारी से उनका शहद उड़ेलकर उसे फिर से छत्ते में फिट कर दिया जाये।

(5) इंसुलिन से भरभूर फल व सब्जियाँ

आप इंसुलिन के नाम और काम से भले ही अपरिचित हों पर 'मधुमेह' के रोगी भली भाँति जानते हैं कि इंसुलिन क्या बला है। उनके लिये तो फिलहाल यह सर्वश्रेष्ठ दवा है, जिसका प्रयोग इन्जेक्शन के सहारे दुनियाभर में किया जाता है। लेकिन वह दिन अब दूर नहीं जब मधुमेह रोगियों के साथ-साथ इंसुलिन की जरूरत सब्जियों की भरपूर उपज के लिए रहेगी। कोरिया में विज्ञान व तकनीकी संस्थान के शोधकर्ताओं ने तम्बाकू की पत्तियों में इंसुलिन पैदा करने में सफलता प्राप्त कर ली है। शोधकर्ताओं का कहना है कि इंसुलिन कुछ खास पौधों से ही प्राप्त की जा सकती है। कोई आश्चर्य नहीं अगर कल आप बाजार जायें और देखें कि वहाँ कुछ फल और सब्जियाँ ऐसी हैं, जिन्हें लोग यह कहकर बेंच रहे हैं कि 'ये इंसुलिन से भरपूर हैं।'

(6) सौर ऊर्जा से चलेंगी साइकिलें

दो पहिया वाहनों में सर्वाधिक प्रचलित व सुलभ सवारी है साइकिल इसकी लोकप्रियता का कोई जोड़ नहीं है पर समस्या है तो सिर्फ यही कि इसे चलाने के लिये ताकत का इस्तेमाल करना पड़ता है। लेकिन अब यह परेशानी भी खत्म समझिये। जर्मनी के कील स्थित तकनीकी विश्वविद्यालय द्वारा ईजाद की गई इस साइकिल से न पर्यावरण को कोई क्षति होगी और न ही इससे धुँआ निकलने की कोई समस्या है। इस स्वचालित साइकिल में एक डी० सी० मोटर लगी है, जिसे ऊर्जा मिलेगी सूर्य से। सूर्य से ऊर्जा बटोरकर चलने वाली यह साइकिल 45 किलोमीटर प्रति घण्टे की रफ्तार से चल सकती है, लेकिन लगातार 3 घण्टे से ज़्यादा नहीं, क्योंकि प्रत्येक 3 घण्टे बाद इसका ऊर्जा स्रोत समाप्त हो जाता है। अगर आपकी यात्रा अवधि 3 घण्टे से ज़्यादा की है, तो आपको कुछ देर के लिये यात्रा रोक देनी होगी। आज जबकि पेट्रोल की एक-एक बूंद को बचाने पर ज़ोर दिया जा रहा है, सौर ऊर्जा द्वारा चलने वाली यह साइकिल सचमुच एक वरदान सिद्ध होगी। □□

पुस्तक समीक्षा

(1) विश्व प्रसिद्ध चिकित्सा पद्धतियाँ
लेखक—अशोक कुमार शर्मा
प्रकाशक—कैमिली बुक्स प्राइवेट लिमिटेड
एफ-2/16, अंसारी रोड, दरियागंज,
नई दिल्ली—110002
तीसरा संस्करण : फरवरी, 1990
मूल्य पेपर बैक संस्करण : 18 रुपये

इस पुस्तक में लेखक ने विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों के इतिहास एवं महत्व पर संक्षेप में किन्तु सभी प्रमुख बिन्दुओं पर प्रकाश डालने का सार्थक एवं सफल प्रयास किया है। एक्यूपन्चर वाले अध्याय में रोग के उपचार के लिये शरीर पर एक्यूपन्चर बिन्दुओं की स्थिति को चित्र द्वारा प्रदर्शित किया गया है। साथ ही एक्यूपन्चर के आधुनिक रूपों यथा—विद्युत एक्यूपन्चर, लेसर एक्यूपन्चर पर भी प्रकाश डाला गया है। कर्ण चिकित्सा में यद्यपि कान के वाह्य भाग में स्थित बिन्दुओं की स्थिति को चित्र द्वारा दर्शाया गया है, फिर भी यह अध्याय छोटा और अधूरा सा प्रतीत होता है। एक्यूप्रेशर वाले अध्याय में हाथ के पंजों तथा पैर के तलवों में एक्यूप्रेशर बिन्दुओं की स्थिति बतायी गयी है, चुम्बक चिकित्सा में चुम्बक की खोज, विभिन्न प्रकार के चुम्बकों का चिकित्सा में प्रयोग तथा चुम्बकीय जल के विषय में अच्छी जानकारी दी गयी है। अस्थि चिकित्सा, परासम्मोहन चिकित्सा, इलेक्ट्रो-कन्वलसिव थिरेपी, स्पर्श चिकित्सा तथा मन्त्र चिकित्सा वाले अध्यायों में जगह-जगह प्राचीन ग्रन्थों के उद्धरण लेकर विषय में रोचकता लायी गयी है और इन चिकित्सा पद्धतियों की सीमाओं का उल्लेख करके लेखक ने एक अच्छा काम किया है। तन्त्र चिकित्सा को कम में ही समेटकर अच्छा ही किया है, अन्यथा इसके दुरुपयोग की ही ज़्यादा सम्भावना रहती। रत्न चिकित्सा वाले अध्याय में कौन सा रत्न कौन से ग्रह से सम्बन्धित है और कौन-कौन सी बीमारियों में उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं, आदि बातों पर प्रकाश डाला गया है, हालांकि रत्न काफी मँहगे और दुर्लभ हैं। आदिम चिकित्सा वाले अध्याय को अनावश्यक रूप से बड़ा कर दिया गया है। इसे भी तन्त्र चिकित्सा की तरह थोड़े में ही समेट देना चाहिये था क्योंकि इन सब चिकित्सा पद्धतियों से अन्धविश्वास को बढ़ावा मिलने की सम्भावना रहती है। निद्रा चिकित्सा पढ़ने पर एक कौतूहल पैदा करती है। वास्तव में अच्छी नींद सोने से मानसिक तनाव जैसी बीमारियों में काफी सुधार होता है। स्मरण रहे अधिक सोना या बिल्कुल न सोना भी एक बीमारी है। योग चिकित्सा, हमारे प्राचीन ऋषियों द्वारा प्रयोग की गयी एक बहुमूल्य चिकित्सा पद्धति है। जल

चिकित्सा, सूर्य चिकित्सा, स्वमूत्र-चिकित्सा, प्राकृतिक चिकित्सा, आदि चिकित्सा पद्धतियों पर भी संक्षेप में चर्चा की गयी है। होमियोपैथी, एलोपैथी आदि के बारे में हालांकि प्राय: सभी जानते हैं, फिर भी इस पुस्तक में इनके बारे में भी पर्याप्त जानकारी दी गयी है। पुतस्क में कुछ पृष्ठों का क्रम इधर-उधर हो गया है। प्रकाशक को इसे ठीक करने की जरूरत है। कुल मिलाकर पुस्तक उपयोगी है और इस कार्य के लिये लेखक और प्रकाशक दोनों ही साधुवाद के पात्र हैं।

—दिनेश मणि

शीलाधर मृदा विज्ञान अनुसंधान संस्थना,
इलाहाबाद—211002

(2) विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक

लेखक—राजीव गर्ग

प्रकाशक—फैमिली बुक्स प्राइवेट लिमिटेड
एक2/16 अंसारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली—110002
चौथा संस्करण, अगस्त 1989
मूल्य—पेपर बैक संस्करण 18 रुपये

इस पुस्तक में लेखक ने विश्व के विभिन्न 40 वैज्ञानिकों—माइकेल फैराडे, गैलीलियो गैलिली, इवानजेलिस्टा टोरिसेली, ओटोवान ग्वेरिके, एनरिको फर्मी, मैक्स प्लांक, लियोनार्दो द विन्शी, सर हम्फ्री डेवी, विल्हेल्म कॉनराड रोंटजन, सर आइजक न्यूटन, एडवर्ड जेनर, सत्येन्द्र नाथ बोस, अलेक्जेण्डर फ्लेमिंग, आर्कमडीज, जे० राबर्ट ओपनहीमर, थामस अल्वा एडीसन, बैंजामिन फ्रैंकलिन, सालिम अली, सर जगदीश चन्द्र बोस, चार्ल्स डारविन, मैडम क्यूरी, सर सी० बी० रामन, विल्बर राइट और ओरविल राइट, ब्लेज पास्कल, एल्बर्ट आइन्सटीन, फ्रेडरिक ऑगस्ट केकुले, जेम्स क्लार्क, मैक्सवेल, गुग्लील्यो मारकोनी, सर जेम्स, चैडविक जॉन लॉगी बेयर्ड, पाइथागोरस, अल्फ्रेड बर्नहार्ड नोबेल, हरगोविन्द खुराना, डॉ० होमी जहाँगीर भाभा, यूक्लिड, श्रीनिवास रामानुजन, अलेक्जेण्डर ग्राहम बेल, लार्ड रदरफोर्ड, ग्रेगर जॉन मेंडल, जॉन नेपीयर की जीवनी को (उनके आविष्कारों सहित) बड़े ही रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। वैज्ञानिकों से जुड़ी कई दिलचस्पी घटनाओं को प्रस्तुत कर पुस्तक को सरस बना दिया गया है। पुस्तक में कुछ भारतीय वैज्ञानिकों की भी जीवनी दी गयी है किन्तु विख्यात रसायनविद् आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र रे (भारतीय रसायन के जनक), प्रो० नीलरत्न धर (विख्यात मृदा-विज्ञानी) को भी इस पुस्तक में जगह मिलनी चाहिये थी। पुस्तक में अन्य भारतीय वैज्ञानिकों—सर शांति स्वरूप भटनागर, प्रो० मेघनाद साहा तथा डॉ० बीरबल साहनी का भी उल्लेख होना चाहिये था। 'नोबेल पुरस्कार' प्राप्त वैज्ञानिक डॉ० एस० चन्द्रशेखर को भूलना भी एक भूल है। चित्रों के माध्यम से खोजों/आविष्कारों को स्पष्ट करने का सफल प्रयास किया गया है। पुस्तक की विषय सामग्री व कलेवर दोनों उत्तम है। लेखक और प्रकाश को इस सुन्दर पुस्तक के लिए बधाई। □□

दिनेश मणि

शीलधर मृदा विज्ञान अनुसंधान संस्थान,
इलाहाबाद—211002

विज्ञान वक्तव्य

प्रिय पाठकगण !

चुनावों के कारण देश का माहौल गर्म है। इलाहाबाद की गर्मी का अपना अलग रंग है। छापाखानों की हालत बिजली की कमी से खस्ता है। ऐसे में किसी पत्रिका का अंक समय से प्रकाशित हो जाये तो चमत्कार है। 'विज्ञान' का समय से छप जाना आश्चर्य है, पर मुझे संतोष है। सो यह अंक आपकी सेवा में प्रस्तुत है।

कुछ शुभ समाचार। टाटा इंस्टीट्यूट ऑव फण्डामेंटल रिसर्च के **डॉ गोविन्द स्वरूप** को लन्दन की रायल सोसायटी का फेलो चुना गया है। एफ आर एस डॉ० गोविन्द स्वरूप को विज्ञान परिषद् परिवार की बहुत-बहुत बधाई। डॉ० स्वरूप तीसरे ऐसे खगोल वैज्ञानिक (एस्ट्रोनामर) हैं जिन्हें यह सम्मान प्रदान किया गया है। इससे पूर्व यह सम्मान डॉ० मेघनाद साहा और डॉ० एस० चन्द्रशेखर को मिल चुका है।

डॉ० गोविन्द स्वरूप रेडियोएस्ट्रोनॉमी के क्षेत्र में अपने शोध के कारण विश्वविख्यात हैं। 23 मार्च 1929 को उत्तर प्रदेश के ठाकुरद्वारा में जन्में डॉ० स्वरूप ने एम० एस-सी और पी-एच० डी० की डिग्रियाँ संयुक्त राज्य अमेरिका से लेने के बाद कुछ समय सिडनी (आस्ट्रेलिया) की रेडियोफिजिक्स की एक प्रयोगशाला में कार्य किया। 1970 से कार्यशील ऊटी रेडियो टेलिस्कोप (तमिलनाडु) आपकी ही देन है।

वास्तव में डॉ० स्वरूप के लिए एफ आर एस का यह सम्मान कोई पहला सम्मान नहीं है। इसके पूर्व आपको भारत सरकार का 'पद्मश्री', 'शांति स्वरूप भटनागर पुरस्कार', 'पी. सी. महालनोबिस मेडल' 'बी. बप्पू मेमोरियल अवार्ड', 'जवाहरलाल नेहरु फेलोशिप' जैसे सम्मान मिल चुके हैं। इस समय आप पुणे के निकट खोदाड़ नामक स्थान में विश्व का विशालतम रेडियो टेलिस्कोप जी एम आर टी को स्थापित करने में अति व्यस्त हैं। और इसी कारण आपके विद्वतापूर्ण व्याख्यान की विज्ञान परिषद को प्रतीक्षा करनी पड़ रही है। आपका यह व्याख्यान सितम्बर या अक्टूबर माह में होगा। दक्षिणी अमेरिका, अफ्रीका या आस्ट्रेलिया में एक अन्तर्राष्ट्रीय टेलिस्कोप की स्थापना करने के आपके स्वप्न के आकार ग्रहण करने की हम भारतीयों को प्रतीक्षा है।

एक और शुभ समाचार। **डॉ० श्री कृष्ण जोशी** जी ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी अनुसंधान परिषद् (सी एस आई आर), नई दिल्ली के महानिदेशक का पद भार संभाल लिया है। इस सम्मान के लिए डॉ० जोशी को बधाइयाँ। 6 जून 1935 को जन्में डॉ० जोशी कुशाग्र प्रतिभा के धनी व्यक्ति हैं। डॉ० जोशी ने एम० एस-सी (फ़िज़िक्स) और पी-एच० डी० की उपाधियाँ भारत के ऑक्सफोर्ड—इलाहाबाद विश्वविद्यालय—से प्राप्त की। आपने छोटी अवधियों के लिए इलाहाबाद विश्वविद्यालय, कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, रुड़की विश्वविद्यालय में भी कार्य किया है। इसके पूर्व आप राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला, नई दिल्ली के निदेशक रह चुके हैं तथा वाटुमुल मेमोरियल पुरस्कार, शांतिस्वरूप भटनागर पुरस्कार, सी एस आई आर सिल्वर जुबिली अवार्ड, मेघनाद साहा अवार्ड और भारत सरकार का पद्मश्री अलंकरण प्राप्त कर चुके हैं। विज्ञान परिषद् पर आपकी विशेष कृपा है। आप परिषद् द्वारा आयोजित अनुसंधान गोष्ठी के अध्यक्ष भी रह चुके हैं और परिषद् के उपसभापति भी हैं।

10 और 11 मई को 'अंतर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ' और 'विज्ञान परिषद् प्रयाग' तथा इलाहाबाद की आर्य समाज की संस्थाओं के सहयोग से विज्ञान परिषद् में एक द्वि-दिवसीय गोष्ठी हो रही है। गोष्ठी का विषय है 'वेद प्रतिपादित युद्ध और शांति'। किन्तु श्रद्धेय **स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जी** की अस्वस्थता हमारे लिए चिंता का विषय है। क्या ही अच्छा होता यदि इस अवसर पर स्वामी जी स्वस्थ होते और हमें उनके आशीर्वाद के साथ ही साथ कुशल निर्देशन भी मिलता।

विगत वर्षों की भाँति इस वर्ष भी 'विश्व पर्यावरण दिवस' पर हमारी योजना पर्यावरण पर विचार-गोष्ठी आयोजित करने की है। पर्यावरण पर विचारोत्तेजक लेख आमंत्रित हैं। आपके सहयोग की आशा और विश्वास के साथ।

आपका

प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव

विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा आयोजित अखिल भारतीय विज्ञान लेख प्रतियोगिता 1991

व्हिटेकर पुरस्कार

दो सर्वश्रेष्ठ लेखों को पाँच-पाँच सौ रुपयों के दो पुरस्कार

शर्तें

(1) लेख विज्ञान के इतिहास से सम्बन्धित या किसी वैज्ञानिक की जीवनी पर होना चाहिए

(2) केवल प्रकाशित लेखों पर ही विचार किया जायेगा।

(3) लेख किसी भी हिन्दी पत्रिका में छपा हो सकता है।

(4) प्रकाशन की अवधि वर्ष के जनवरी और दिसम्बर माह के बीच कभी भी हो सकती है।

(5) इस वर्ष पुरस्कार के लिए लेख जनवरी 1991 से दिसम्बर 1991 माह के बीच प्रकाशित हो।

(6) लेखक को साथ में इस आशय का आश्वासन देना होगा कि लेख मौलिक है।

(7) विज्ञान परिषद् के सम्बन्धित अधिकारी इस प्रतियोगिता में भाग नहीं ले सकते।

(8) वर्ष 1991 के पुरस्कार के लिए लेख भेजने की अंतिम तिथि 15 मार्च 1992 है।

लेख निम्न पते पर भेजें—

प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव

संपादक 'विज्ञान', विज्ञान परिषद्, महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद-211002